

{

१ श्रीमद्भोस्वामितुलसीदासकृत

## रामायण (सटीक)

पंडित-ज्वालाप्रसादकृतटीका। २५

लीजिये रामायण सटीकभी लीजिये असल पुस्तक श्रीगुसाई-  
जीकी लिपिके अनुसार व सम्पूर्ण क्षेपकों सहित जिसमें शंका समा-  
धान अद्यपर्यंत विस्तारपूर्वक लिखें हैं इसके टीकाकी रचना ऐसी  
उत्तम और अपूर्व मनभावन सुखद वावन रामयशपावन है कि,  
पढ़ते २ कदापि तृप्ति नहीं होती तुलसीदासजीका जीवनचरित्र  
रामवनवास तिथिपत्र माहात्म्यभी सम्मिलित है कीमत ८ रु०  
डाकमहसूल २ रु०

## २ रामायण बडा।

सहित श्रीकाथ गूढार्च छन्दार्थ स्तुत्यर्थ शंकासमाधान और  
तुलसीदासजीका जीवनचरित्र, रामवनवासतिथिपत्र, रामाश्रमध-  
लवकुशकाण्ड, माहात्म्य और वरवारामायणके जिसमें पंचीकर-  
णका बडा नक्शा और ३८०० कठिन २ शब्दोंके अर्थ लिखेहैं  
अक्षर अत्यंत मोटा ग्लेजकागजका की० ८रु० रफ् कागजका ४रु०

## ३ रामायण मझोला।

ऊपरके सब अलंकारोंसहित इसका सांचा छोटा है अक्षर  
सामान्यहै कीमत २॥ रु० रफ् १॥ रु०

## ४ रामायण गुटका।

यहभी पूर्वोक्त सब अलंकारोंसे पूरितहै साधु तथा देशाटनकर-  
ज्ञेवालोंको अत्यंत उपयोगीहै कीमत बहुतही थोड़ी केवल १रु० है।  
योग।

# शास्त्रप्रभाद् ।

द्रव्यमहाविद्याओंका और पञ्चदेवोंका पञ्चांग ।

सम्पूर्ण भारतनिवासि द्विजोत्तमोंपर विदित हो कि, यह अलभ्य क्षिष्टतासे प्राप्त परमगुप्त अत्युत्तम नवीन ग्रंथ हमारे यहां उपा है इसमें आदिशक्ति जगन्माताके देशोस्वरूप अर्थात् काली, तारा, त्रिपुरसुंदरी, भुवनेश्वरी, छिन्नमस्ता, त्रिपुरभैरवी, धूमावती, बगलामुखी, मातंगी, कमलात्मिका, तथा पंच देवता दुर्गा, शिव, गणेश, सूर्य, विष्णु, और वेदोक्त, शास्त्रोक्त मंत्रोक्त, तंत्रोक्त, विस्तारपूर्वक लिखीहै जिनके चित्र (स्तब्दीरं) भी फोटोग्राफानुसार यथावत् खींचीगई हैं इस ग्रंथका मूल्य ५ मुद्रा।

## ( गदाप्रतिः ।

सान्वय अत्युत्तम सरल हिंदिभाषाईकासहित छपकर विक्रयार्थ प्रस्तुतहै ऐसा उत्तम ग्रंथ अद्यावधिपर्यंत कहीं नहीं उपाया भारतवर्षके राजा महाराजा तथा विप्रगण इसके अनुसार राजनीति और प्रजापालन धर्मशासन करते हैं यहाँतक कि श्रीमन्महा राज अंग्रेज वहादूरभी इसका अदलम्ब लेते हैं यह ग्रंथ परमसुंदर मोटे ट्रैप और जाडे विलायती कागजपर उपाहै को ३ रु०

## श्रीमद्भागवत संस्कृत तथा भाषाईका सहित ।

श्रीवेदव्यासप्रणीत श्रीमद्भागवत अठारहों पुराणोंमें श्रीमद्भागवत सबसे कठिनहै और इसका प्रचार भारतस्वरूपमें सबसे अधिक है यह ग्रंथ क्षिष्टताके कारण सर्व साधारण लोगोंको टीका होनेपरभी अच्छीरीतीसे समझना कठिनया कोई २ स्थलमें बड़े ३ प्रणितोंकी बुद्धि चक्रमें उड़जातीशी इसलिये विनासंस्कृत पढ़े सर्व साधारण पण्डित व स्वल्पविद्या जाननेवाले भगवत्भक्तोंके लाभार्थ संस्कृतमूल अतिशिय ब्रजभाषाईका सहित जोकि हिन्दी भाषाओंमें शिरोमणि और माननीयहै उसी भाषामें टीका बनवाकर प्रथमावृत्ती उपायाया ओ श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंदकी कृपाकटाक्षसे बहुतही जल्दी हाथोंहाथ चिकर्गई अब इसकी द्वितीयावृत्ती प्रथमावृत्तीकी अपेक्षा अच्छीतरह शुद्ध करवाके मोटे अक्षरमें उपायाहै और संवंधित कथाओंके शिवाय उत्तमोत्तम भक्तिज्ञानमार्ग १०० अतीव मनोहरदृष्टांत दिये हैं कि जिनके श्रवणसे श्रोताओंका मन भावनानुसार मग्न होजाता है कागज विलायती बहियां लगायाहै माहात्म्यघष्टाध्यायी भाषाईका सहित इसके साथही है प्रथमावृत्तीमें मूल्य ३५ रुपयाया इस भावृत्तीमें केवल १२ वाराही रुपया रक्खा है ज्यादा ग्रंथसा जाहुमुच्यमात्रहै (दोहा) एकघड़ी आधीघड़ी, ताहूकी पुनिजाध ॥ नेमसहित जो नितपढ़े, फट्टकोटि अपराध ॥ १ ॥

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास “लक्ष्मीविंकटेश्वर” छापाखाना कल्याण-मुंबई

# नाडीदर्पणस्यानुक्रमणिका ।

विषय	पत्र	विषय	पत्र
मंगलाचरण	१	जल स्थल जीवोंकी गतिके अनुसार नाडीकी गति परीक्षणिय	१५६
वाग्भट	२	सहुरुद्वारा नाडीकी गति पठनीय	१५७
रोगोंके आठस्थान	"	नाडीकर्त्ता काल्पन्त्व विलक्षणता	१५८
वैद्योंके सुखार्थ ग्रंथनिर्माण	"	और स्थस्थावस्थामें नाडीको विलक्षणत्व	१५९
नाडीको मुख्यतत्व	"	नाडीकी अवस्था सर्वदा ज्ञातव्यत्व	१६०
नाडीज्ञानविना वैद्यकी अप्रतिष्ठा	"	नाडीके स्पन्दनका कारण	१६१
नाडीज्ञानविना वैद्यको अधमत्व	"	नाडीके नाम	१६२
सर्व रोगमें प्रथम नाडी देखना	"	नाडीके भेद	१६३
नाडी ज्ञानके विना धन धर्म और यशकी अप्राप्ति	"	सुपुत्रा नाडीका वर्णन	१६४
नाडी मूत्रादि ज्ञानके पश्चात् औपध देना	४	नाभिमें गोपुच्छसमान नाडीयोंका कथन	१६५
नाडी देखनेमें वीणा तनुका दृष्टांत	"	साडेतीनकरोड़ नाडी	१६६
नाडी ज्ञानविना निदानहारा रोग निर्णय कर्ता वैद्यको अधमत्व	"	नाडीयोंके साडेतीनकरोड़ मुख तिनमें एकहजार और बहत्तर सूत्र- ल नाडी	१६७
निदान और नाडीके लक्षण मिला- कर चिकित्सा करनेकी आज्ञा वैद्यके प्रति आज्ञा	"	सातसों नाडी और उनके कर्म	१६८
नाडीपरीक्षाकथन	"	यह देह नाडीयोंसैं मृदंगके तुल्य मढ़ाहै	१६९
नाडीज्ञानकी परिपाटी	"	चोरीस नाडीयोंको मुख्यत्व	१७०
नाडीज्ञानकी उत्कृष्टता	"	देहधारियोंके कूर्मकी स्थिति और धर्मनी नाडीयोंकी गणना	१७१
नाडीदर्पण पढनेका कारण	"	लक्षिके वामभागकी और पुस्तेंके दक्षिणभागकी नाडी देखना	१७२
परीक्षाको मुख्यत्व	"	छः नाडी द्रष्टव्य	१७३
गाडीपरीक्षामें अभ्यासकारण	"	नाभी आदिकी नाडी देखना	१७४
अभ्यासके तुल्य नाडीज्ञानकथन	६		"

# अनुक्रमणिका

सोलह नाडीन्के देखनेकी आज्ञा....	१२	नाडीन्का स्पर्शी ....	....
कंठनाडी ....	”	कालपरत्व नाडीकी गति ....	....
नासानाडी ....	”	वातादि स्वभावक्रम ....	....
उक्तनाडियोंका प्रमाण ....	”	उक्तश्लोकका विरोधी वचन	....
जीवको नाडीके आधीनत्व कथन	१३	नाडीचक्र....	....
परीक्षणीय ....	”	उक्तश्लोकका पुष्टिकर्त्ता हृष्टांत	२१
नाडीज्ञानका समय....	”	ग्रंथकारका मत ....	....
निषिद्ध काल....	”	वादातिकोंकी क्रमसे गति	....
नाडी देखनेयोग्य वैद्य	१४	वादातिकोंकी विशेष गति	....
मूढ़ वैद्य ....	”	हृष्ज नाडीकी चाल	....
नाडी देखनेयोग्य रोगी ....	”	प्रकारान्तर	....
नाडी दर्शनमें अयोग्य ....	१५	त्रिदोषकी नाडी ....	....
परीक्षा प्रकार	”	सामान्यतापूर्वक सुखसाध्यत्व	....
दूसरा प्रकार	१६	असाध्यत्व	....
जीवनाडी	”	असाध्यत्वमें प्रमाणान्तर	....
त्रियोंके वामहाथ पैरकी और पुरु- षोंके दहनहाथ पैरकी नाडी र- त्तके समान परीक्षा करे ....	”	असाध्य नाडीका परिहार	....
अंगुष्ठमूलकी नाडी परीक्षणीयहै ....	१७	प्रसंगवश कालनिषय	....
स्वस्थप्राणीकी नाडीपरीक्षा	”	मासांतरमें मरणकी नाडी	....
स्पर्शनादिको मुख्यत्व होनेसे उनका वर्णन	”	सातादिवसमृत्यु ज्ञान	....
गुरुद्वारा नाडीके परीक्षाका प्रकार	१८	चतुर्थादिवस मृत्युज्ञान	....
शास्त्र और पवनप्रवाहके अनुसार तथा गुरुकी आज्ञानुसार नाडी परीक्षा	”	तृतीयादिवस मृत्युज्ञान	....
त्रिवार नाडीपरीक्षा करनेकी आज्ञा	”	एकदिवसमें मृत्यु....	....
तीन उंगलियोंसे नाडी परीक्षाका क्रम	”	तथा	....
रोगराहत मुनुप्तकी नाडी	”	असाध्य नाडी	....
नाडीके	१९	द्वितीयदिवस मृत्युका ज्ञान	....
नाडीन्के	”	सप्तरात्रिमें रोगीकी मृत्युका ज्ञान	....
	२०	एकपक्षमें मरणका ज्ञान	....
	”	त्रिरात्रि जीवनका ज्ञान	....
	२१	नाडीद्वारा अन्य असाध्य लक्षण	....
	”	एकप्रहरमें मृत्युका ज्ञान....	....
	२२	द्वितीयदिन मृत्युका ज्ञान	....
	”	बारेप्रहरमें मृत्युका ज्ञान....	....

ज्वालावधि जीवनका ज्ञान	.....	शूलरोगमें	.....	.....	.....	४०
अर्द्धप्रहरमें मृत्यु	.....	”	प्रमेहरोगमें	.....	.....	४१
एक प्रहरमें मृत्यु	.....	”	विषविष्टभुल्मज्ञान	.....	.....	४२
तीसरे दिन मृत्यु	.....	”	गुल्मरोगमें	.....	.....	४३
पंचमदिवस मृत्यु	.....	३३	भगंदररोगमें	.....	.....	४४
नाडीद्वारा आयुका ज्ञान	.....	”	वान्तादि ज्ञान	.....	.....	४५
नाडीद्वारा मोजनका ज्ञान	.....	”	नाडीस्पन्दन संख्या	.....	.....	४६
नाडीद्वारा रसोंका ज्ञान	.....	३४	प्रण फल दंड आदि संज्ञा	.....	.....	४७
मांसादि लक्षणकी नाडी	.....	३५	मतांतरसैं स्पन्दन संज्ञा	.....	.....	४८
उपवास और संभोगकी नाडी	.....	”	कारण	.....	.....	४९
कुपथ्यवस नाडीकी चाल	.....	”	आत्मनाडीका कारण	.....	.....	५०
 ज्वरके पूर्वरूपमें नाडीकी चाल	.....	”	तेजपुंजादि नाडीकी गति	.....	.....	५१
ज्वरके रूपमें	.....	”	चंचला और तेजपुंजा गति	.....	.....	५२
वातज्वरमें	.....	३६	दुर्बला और क्षीण नाडी	.....	.....	५३
पित्तज्वरमें	.....	”	सुखीपुरुषकी नाडी	.....	.....	५४
कफज्वरमें	.....	”	युक्ति और अनुमानादिद्वारा नाडी	.....	.....	५५
द्वाद्वज नाडीकी गति	.....	३७	को जानना	.....	.....	५६
रुधिरकोपजा नाडी	.....	”	नाडी दर्शनानंतर हस्तप्रकालन	.....	.....	५७
आगंतुक रूपभेद	.....	”	तथाच	.....	.....	५८
तथा विषमज्वरमें	.....	”	<b>यूनानीमतानुसार</b>	.....	.....	५९
ज्वर उद्देग क्रोध काममें नाडीकी गति	.....	”	<b>नाडीपरीक्षा</b>	.....	.....	६०
प्रसंगवसव्यायाम ऋमणादिकी नाडी	.....	३८	हयवानी नप्सानी नाडी	.....	.....	६१
पक्काजीर्ण रुधिरपूर्ण और आम-	.....	”	सुरियान् नाडी	.....	.....	६२
वातकी नाडी	.....	”	असव नाडी	.....	.....	६३
दीपाश्रि मंदाश्रि क्षीणधातु और न-	.....	”	चार उंगलियोंसे नाडी परीक्षण	.....	.....	६४
ष्ट अग्निमें नाडीकी गति	.....	३९	नाडीकी गिजाली गति	.....	.....	६५
ग्रहणीरोगे	.....	”	मौजी गति	.....	.....	६६
ग्रहणी अतिसार विलंबिका और	.....	”	दूषि गति	.....	.....	६७
अतिसार रोगमें नाडीकी गति	.....	”	उमली गति	.....	.....	६८
विषुचिकाज्ञान	.....	”	मिन्शार गति	.....	.....	६९
आनाटमचक्रकर्त्तव्यमें	.....	”	जन्वल्फार गति	.....	.....	७०
		”	माली गति	.....	.....	

## अनुक्रमणिका

जुलिफ्करत् गति....	.....	उठने वैठने आदिमें नाडीका विचार	५३
मुर्त्तइद गति सौदार्थी	.....	अफीम आदि उष्णभोजनमें नाडी-	
मुर्त्तइस (सौदासफरा विशिष्ट) नाडी	४९	की गति .....	
मुमृतिला गति .....	”	नाडी देखनेकी विधि .....	
मुनुखफिज़ गति....	”	आरोग्यावस्थाकी नाडी .....	५७
शाहक् बुलन्द गति .....	”	अवस्थानुसार नाडीगतिचक्र	
दराज और तवील गति....	”	रोगावस्थाकी नाडी .....	६८
कसीर अमीक और अरीज गति	४९	 <b>इंग्रजी संज्ञा.</b>	
गल्वे कसूर अरक्षात्	”	फ्रीकैंट गति .....	”
वाकियुत्वस्त नाडी	”	इन् फ्रीकैंट गति .....	”
यूनानीमतानुसार नाडीचक्र	”	रेयूलर गति .....	”
नठन कहनेका कारण	”	इरेग्यूलर गति .....	”
नाडी देखनेके नियम	५१	इन्टर्मिटेंट गति .....	५९
इस्वसात् और इन्कि वाजगतियोंका वर्णन और चक्र	”	लार्जगति....	”
खिलत वर्णन	”	इस्माल गति .....	”
प्रत्येक दोषमें दो दो गुण	”	थ्रेडीपल्ट गति .....	”
चक्रद्वारा इस्वसातके भेद	५२	हार्ड गति .....	”
दूसरा चक्र	”	साफ्ट गति .....	”
कुत्र अर्थात् प्रस्तार	”	कीक गति .....	”
नाडीनका प्रस्तार चक्र	”	स्लो गति .....	६०
अथेंगलंडीयमतेन नाडीपरीक्षा	”	नाडीदर्शक यंत्र अर्थात् स्फिग्मोग्राफ़ का वर्णन	”
पत्ससंज्ञा और उसका भेद	”	स्फिग्मोग्राफ़ लगानेकी विधि .....	६१
२७		डाकटरी मतानुसार नाडीचक्रम् .....	”

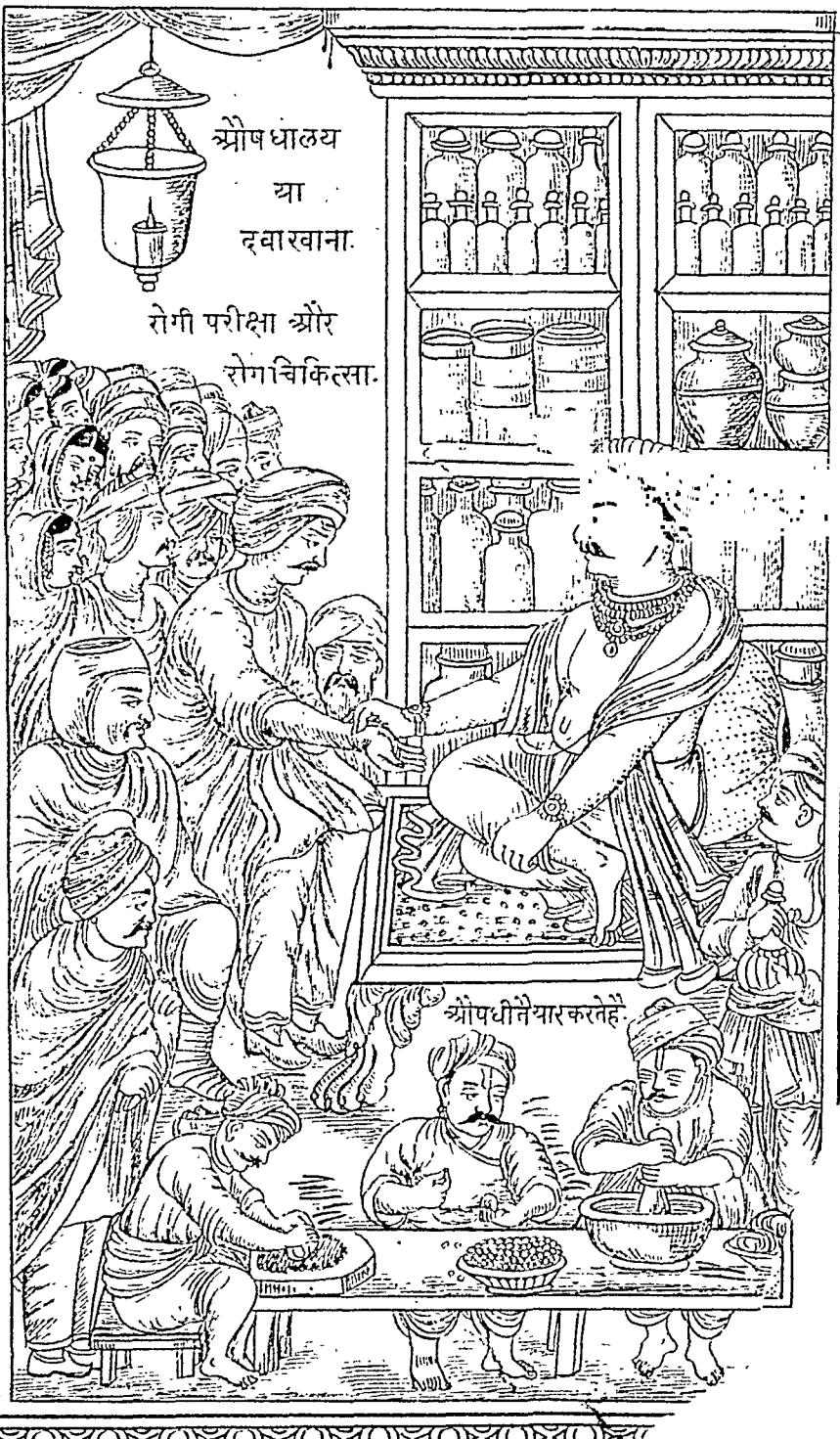
**इति नाडीदर्पण विषयानुक्रमणिका समाप्ता**

पुस्तकमिलनेका ठिकाना—

**गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास**

**“लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर” छापाखाना**

**कल्याण—मुम्बई**



श्रीष धालय

या

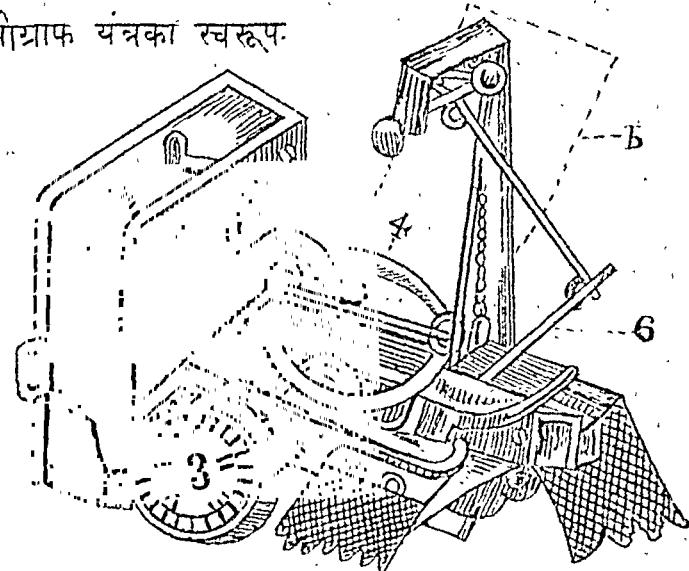
दवारवाना

रोगी परीक्षा और

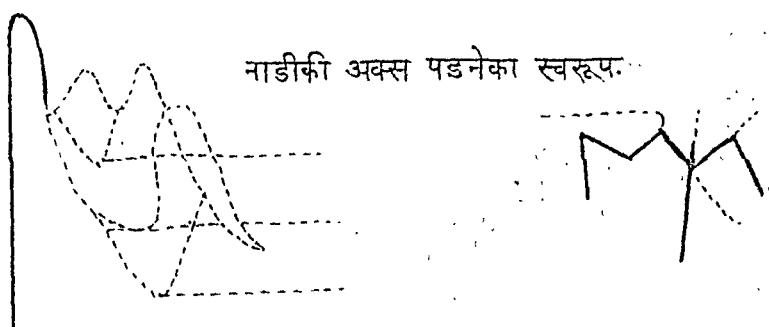
रोगचिकित्सा.

श्रीपधीनेयारकरते हैं

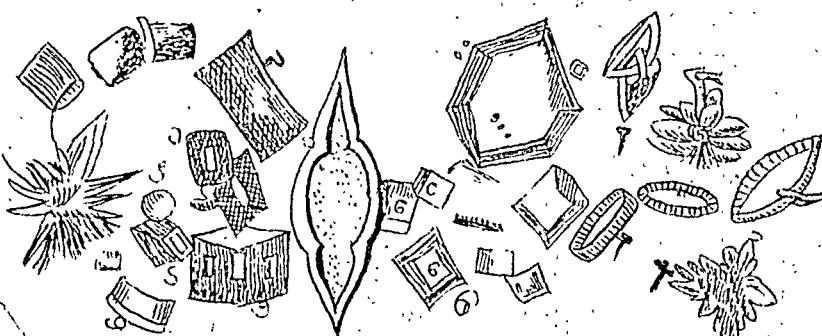
स्फुरण्याक यंत्रका स्वरूप.



नाडीकी अक्स पडनेका स्वरूप.



मूल जन्म्य पदार्थ.



पहसुंजा

१४

१५

१६

१७

१८

१९

२०

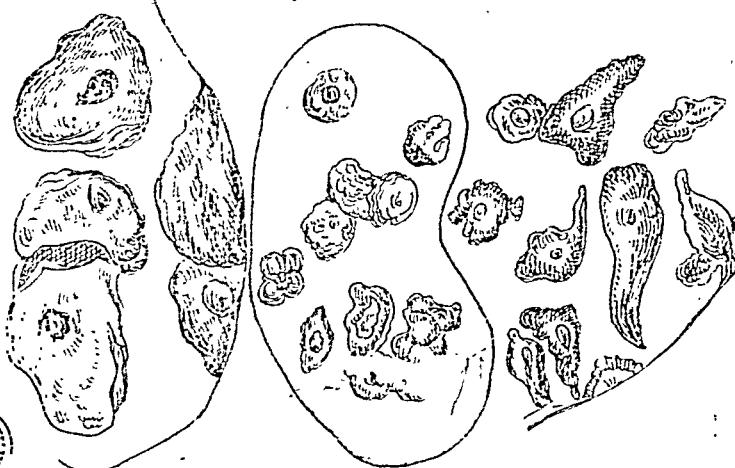
२१

नाडी

खुदवीन

मूर्वजन्य द्वितीय प्रकारके पदार्थ

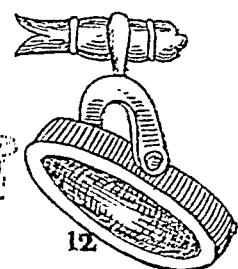
10  
9



8

6

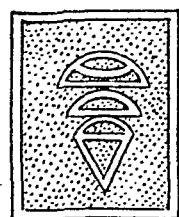
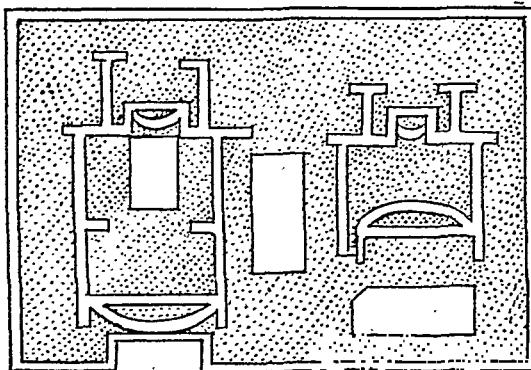
12



2

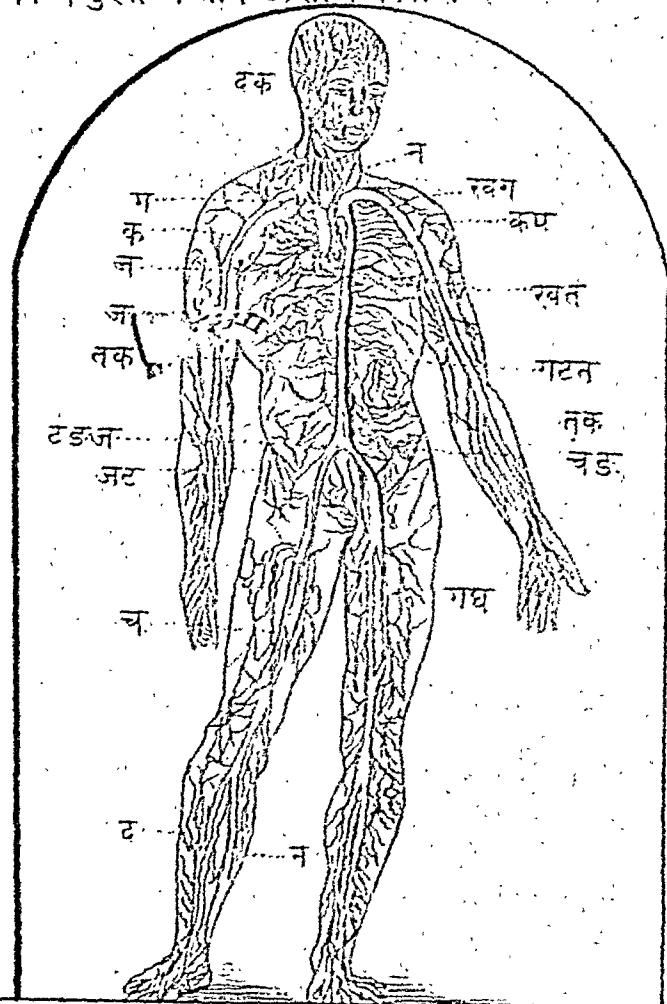
मूर्वदर्शक

खुदवीन



# धमनी प्रदर्शक चित्र.

इस धमनी प्रदर्शक चित्रमें खग धमनी मूल वह अधर्माभिमुखी, कथाद गानी तथा निम्नभिमुखी ये तीन अशीमें विभक्त हैं।



दक	कपालस्थ धमनी।	च	उदरस्थ नाडी।
भुक	गलस्थ धमनी।	द	नलकास्थीय धमनी।
ग	केठस्थ धमनी।	न	जानुपश्चात् धमनी।
क.	कक्ष नाडी।	व	जानुस्थ सन्मुख नाडी।
ज	धमनी स्कंध वावक्षास्थ मूल नाडी।	खत	पर्शकाभ्यन्तर धमनी।
तड़	उदरस्थ मूल नाडी।	हक	प्रगंडीय नाडी।
टड़	ज आयंतर (भीतरका) वस्तिनाडी।	तक	मणिवंधस्थ नाडी।
जट	बाह्य (बाहरकी) वस्तिनाडी।	गध	प्रकोष्ठीय धमनी।

श्रीमन्तं ।

आनन्दकुञ्जविहारिणे नमः ।

## अथ नाडीदर्पणप्रारम्भः ।

मङ्गलाचरणम् ।

श्रीमन्तं जगदीश्वरं गदगदाधारश्च धन्वन्तरि-  
मम्बां श्रीजगदभ्विकाप्रतिकृतिं श्रीकृष्णलालाभिधम् ।  
तातं कृष्णपरावतारमहिमं नत्वा मुहुः संयतः  
श्रीकृष्णाङ्गिसरोरुद्युसुधाधारामिलिन्दायितः ॥ १ ॥  
श्रीमन्माथुरमण्डलाभिजननः श्रीदत्तरामाभिधो  
द्वावा तन्त्रसमूहमूहविधयाऽऽलोङ्घ्य स्वयं यत्ततः ।  
बालानां सुखहेतवे मतिमतामानन्दसंप्राप्तये  
नाडीदर्पणनामधेयकमिमं ग्रन्थं करोम्यादरात् ॥ २ ॥ युग्मम् ।

अर्थ—श्रीमान् जगदीश्वर रोग और आरोग्यके आधार ऐसे श्रीधन्तरि भगवान् तथा जगन्माता ( लक्ष्मी ) के तुल्य रमा नामक अपनी माताको तथा कृष्णका परावतार ऐसे श्रीकृष्णलाल ( कन्हैयालाल ) नामक अपने पिताको वारंवार यत्त्रपूर्वक नमस्कारकर श्रीकृष्णचरणकमलयुगलामृतधाराको पानकरता भ्रमर और श्रीमधुपुरीमंडल अथवा माथुरद्विज ( चोंवे ) नको मंडल कहिये समूह तामें निवास जाकों, अथवा जन्म जाको ऐसा जो दत्तराम संज्ञक में सो अनेक शास्त्रसमूहको देख और स्वर्यविधिपूर्वक य... मथनकर बालकोंके सुखकेलिये और पंडितोंके आनन्दकी प्राप्तीकेर्थ इस नाडीदर्पण नामक ग्रन्थको परमआदरसे करताहूं । यहग्रन्थ यथानाम तथा गुणोंमेंभी है अर्थात् जैसें दर्पणसे इसप्राणीके संपूर्ण गुणदोष प्रकटहोतेहै उसीप्रकार इसग्रन्थसे नाडियोंके संपूर्ण गुणदोष उत्तम निकलते हैं ॥ १ ॥ २ ॥

वाग्भटः ।

अधर्वा भिसुखी, पश्चाद्

रोगमादौ परीक्षेत तदनन्तरमौषधम् ॥  
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाच-

अर्थ—वाग्भट ग्रंथमें लिखाहै वैद्यको उचितहै कि प्रथम रोगजाननेके अनंतर औषधकी परीक्षा करे रोग और औ पश्चात् ज्ञानपूर्वक अर्थात् सावधानीकेसाथ चिकित्साकरे यानी औषध

लक्षयित्वा देशकालौ ज्ञात्वा रोगबलावलम् ॥

चिकित्सामारभेदैव्यो यशः कीर्तिमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥

अर्थ—देश और कालका लक्ष करके और रोगको बली और निर्विलित जो वैद्य चिकित्साका प्रारंभ करताहै वह यश, और कीर्तिको पाताहै ॥ ४ ॥

रुग्णावस्थां ततो नाडीं भेषजं पथ्यमेव च ॥

देशं कालश्च पात्रश्च यो जानाति स वैद्यराट् ॥ ५ ॥

अर्थ—जो रोगीकी अवस्था, नाडी, औषध, पथ्य, देश, काल, और पात्रको जानताहै । उसको वैद्यराज कहतेहै ॥ ५ ॥

रोगोंके आठस्थान ।

रोगक्रान्तशरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत् ॥

नाडीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्दस्पर्शहृगाकृतिम् ॥ ६ ॥

अर्थ—वैद्य रोगी मनुष्यके आठ स्थानोंकी परीक्षाकरे, जैसे कि नाडीपरीक्षा, मूत्रपरीक्षा, मलपरीक्षा, जिह्वापरीक्षा, शब्दपरीक्षा, स्पर्शपरीक्षा, नेत्रपरीक्षा और रोगीकी आकृतिकी परीक्षा ॥ ६ ॥

नानाशास्त्रविहीनानां वैद्यानामल्पसेधसाम् ॥

नान्याद्यष्टपरीक्षाश्च सुखार्थं प्रभवन्ति हि ॥ ७ ॥

अर्थ—अनेक शास्त्र पढनेकरके रहित अल्प बुद्धि वैद्योंके लिये यह नाडी आदि अष्टविधपरीक्षा सुखके अर्थ होकेगी ॥ ७ ॥

आद्यं तावन्नाडिकाविज्ञानादेव वातपित्तकफजनितानामा-

तज्ज्ञानां साध्यासाध्यकष्टसाध्यसभेदकविज्ञानं सुकरत्वेन

भिषग्भिरवाप्यतेऽत एव तावन्निरूप्यते ॥ ८ ॥

अर्थ—तहाँ प्रथम वैद्योंको नाडीके देखनेसे ही बात, पित्त, और कफजनित रोगोंका साध्यासाध्य और कष्टसाध्य सभेदविज्ञान सहजमें प्राप्त होसकताहै; अतएव प्रथम उसी नाडीपरीक्षाका वर्णन करतेहैं। प्रथम नाडीदेखनेकी आवश्यकता दिखाते हैं ॥ ८ ॥

नाडीज्ञानकी आवश्यकता ।

नाडीज्ञानं विना वैद्यो न लोके पूज्यतां ब्रजेत् ॥

अतश्चातिप्रयत्नेन शिक्षयेदुद्धिमान्नरः ॥ ९ ॥

अर्थ—नाडीज्ञानके बिना वैद्य संसारमें पूज्य (माननीय) नहीं होता अतएव बुद्धिमान् मनुष्यको उचितहै कि नाडीज्ञानको सद्गुरुसें अति यत्नपूर्वक सीखे अर्थात् नाडी देखनेका अनुभव करे ॥ ९ ॥

बोधहीनं यथा शास्त्रं भोजनं लवणं विना ॥

पतिहीना यथा नारी तथा नाडीं विना भिषक् ॥ १० ॥

अर्थ—जैसें बोधविना शास्त्रपठनकी शोभा नहीं, विना लवण भोजनके पदार्थ प्रियनहीं, और पतिके बिना स्त्रीकी शोभा नहीं, उसीप्रकार नाडी ज्ञानके बिना वैद्यकी शोभा नहींहै ॥ १० ॥

नाडीजिह्वार्त्तवादोनां लक्षणं यो न विन्दति ॥

मारयत्याग्नु वै जन्तून्स वैद्यो न च शोभनः ॥ ११ ॥

अर्थ—जो नाडीपरीक्षा, जिज्ञापरीक्षा, और स्त्रीके आर्त्तवकी परीक्षा नहीं जाने वह मूढवैद्य तत्काल रोगीयोंको मारताहै इसीकारण ऐसा मूढवैद्य उत्तम नहींहै ॥ ११ ॥

आदौ सर्वेषु रोगेषु नाडीजिह्वाग्रनेत्रकम् ॥

मूत्रार्त्तवं परीक्षेत पश्चाद्गुणं चिकित्सयेत् ॥ १२ ॥

अर्थ—वैद्य प्रथम संपूर्ण रोगोंमें नाडी, जिह्वा, नेत्र, मूत्र, और आर्त्तवकी परीक्षा तर फिर रोगीकी चिकित्सा करे ॥ १२ ॥

नाडीज्ञानं विना यो वै चिकित्सां कुरुते भिषक् ॥

स नैव लभते लक्ष्मीं न च धर्मं न वै यशः ॥ १३ ॥

अर्थ—जो वैद्य बिना नाडीपरीक्षाके जाने चिकित्सा करताहै वह धन, धर्म, और यशको नहीं प्राप्तहोता परंतु उसको अपयशकी प्राप्ती और मूर्ख कहलाताहै ॥ १३ ॥

नाड्या मूत्रस्य जिह्वायाः कुरु पूर्वं परीक्षणम् ॥  
औषधं देहि तज्ज्ञाने वैद्य रुग्णसुखावहम् ॥ १४ ॥

अर्थ—हे वैद्य! प्रथम नाडी, मूत्र, और जिह्वाका परीक्षण कर जब नाडी मूत्र और जिह्वाको परीक्षाद्वारा रोगका निश्चय करलेंवे तब रोगीको सुखकारी औषधी दे ॥ १४ ॥

यथा वीणागता तन्त्री सर्वात्रागान्प्रभाषते ॥  
तथा हस्तगता नाडी सर्वानुरोगान्प्रकाशते ॥ १५ ॥

अर्थ—जैसैं वीणाका तार संपूर्ण रागोंको सूचना करताहै, उसी प्रकार हाथकी नाडी सर्वरोगोंको प्रकाशित करतीहै इस श्लोकका तात्पर्य यह है वीणाका तारभी जो बजानेवालेहै उन्हींको उस तारके रागकी प्रतीत होती है उसीप्रकार हाथकी नाडीभी जो नाडीके जानने वालेहै उन्हींको रोगप्रकाशित करतीहै जैसे मूर्खके वास्ते तारद्वारा राग नहींमालुमहो उसीप्रकार मूर्खवैद्यको नाडीदेखना निष्प्रयोजनहै ॥ १५ ॥

नाडीलक्षणमज्ञात्वा निदानयन्थवाक्यतः ॥  
चिकित्सामारभेद्यस्तु स मूढ इति कीर्त्यते ॥ १६ ॥

अर्थ—जो वैद्य नाडीके लक्षण बिना जाने केवल निदानयन्थके वाक्योंसे रोगपरीक्षा कर चिकित्सा करताहै वह मूढ ( मूर्ख ) ऐसा कहलाता है ॥ १६ ॥

निदानपञ्चकादीनां लक्षणं वैद्यसत्तमः ॥  
नाडींतु संवलीकृत्य चिकित्सामाचरेत्खलु ॥ १७ ॥

अर्थ—इसीकारण उत्तमवैद्य निदान पञ्चकादिके लक्षण जानके और उनमें नाडीके लक्षणभी मिश्रित ( सामिल ) करके चिकित्साका प्रारंभ करे ॥ १७ ॥

कियत्स्वपि च चिह्नेषु ज्ञातेष्वपि चिकित्सतम् ॥  
निष्फलं जायते तस्मादेतच्छृण्वेकचेतसा ॥ १८ ॥

अर्थ—अब कहते हैं कि बहुतसे चिन्ह जानने परभी चिकित्सा निष्फल होजाती है अतप्रव इसनाडीदर्पणयन्थमें जो कहा जाताहै उसको हवैद्य! तू एकाग्र चित्तसे सुन १८

तत्रादौ श्रोच्यते नाडीपरीक्षातिप्रयत्नतः ॥

नानातन्त्रादुसारेण भिषगानन्ददायिनी ॥ १९ ॥

अर्थ—तहाँ प्रथम अनेक ग्रंथोंके अनुसार वैद्योंको आनंददायिनी यत्रपूर्वक नाडीपरीक्षा कहते हैं ॥ १९ ॥

कचिद्ग्रन्थानुसंधानादेशकालविभागतः ॥

कचित्प्रकरणाच्चापि नाडीज्ञानं भवेदपि ॥ २० ॥

अर्थ—अब नाडीज्ञानकी परिपाटी कहते हैं कि कहींतो नाडीज्ञान व्रथ पठनेसे होता है, कहीं देश कालके जाननेसे, और कहीं प्रकरण वशसे नाडीका ज्ञान होता है, तात्पर्य यह है कि वैद्य केवल व्रथकेही भरोसे न रहे, किंतु कुछ अपनीभी बुद्धिसे विचारे यह कौन स्थान है, कौनसा काल है, और ये रोगी क्या आहार विहार करके आया है, इसप्रकार अच्छी रीतिसे विचारकर नाडीको कहे ॥ २० ॥

सद्गुरोरुपदेशाच्च देवतानां प्रसादतः ॥

नाडीपरिचयः सम्यक् प्रायः पुण्येन जायते ॥ २१ ॥

अर्थ—अब नाडीज्ञानकी उत्कृष्टता दिखाते हैं कि सद्गुरु अर्थात् सदैव्यके बतानेसे और देवताओंकी प्रसन्नतासे तथा पूर्वजन्मके पुण्यकरके नाडीपरिचय होता है, किंतु अपने आप पठनेसे और विनादेव कृपाके तथा अधर्मी नास्तिकको नाडी देखनेका ज्ञान नहीं होता है, अतएव जिसको नाडीज्ञानकी आवश्यकता होवे वो सहुरु और देवसेवा तथा धर्ममें तत्पर होय ॥ २१ ॥

नाडीपरिचयो लोके न च कुत्रापि हृश्यते ॥

तेन यत्कथ्यते चात्र तत्समाधेयमुत्तमैः ॥ २२ ॥

अर्थ—नाडीका परिचय अर्थात् नाडीदेखनेका ज्ञान इससंसारमें कहीं नहीं दीखता इसीकारण जो इसव्रंथमें कहाजाता है वो उत्तमपुरुषोंको अवश्य जानना चाहिये ॥ २२ ॥

परीक्षणीयाः सततं नाडीनां गतयः पृथक् ॥

न चाध्ययनमात्रेण नाडीज्ञानं भवेदिह ॥ २३ ॥

अर्थ—वैद्यको उचित है कि निरंतर नाडीकी गतिकी परीक्षा कराकरे क्योंकि केवल पठनेहीसे नाडीका ज्ञान नहीं होता ॥ २३ ॥

न शास्त्रपठनाद्वापि न बहुश्रुतकारणम् ॥

नाडीज्ञाने मनुष्याणामभ्यासः कारणं परम् ॥ २४ ॥

अर्थ—नाडीके ज्ञानमें शास्त्रपठनेसे अथवा बहुतनाडी संबंधी वार्ताओंके सुननेसे नाडीका ज्ञान नहीं होता, किंतु नाडीज्ञानमें मनुष्योंको केवल अभ्यासही परम कारण है इससे अभ्यासकरे ॥ २४ ॥

नाडीगतिमिमां ज्ञातुं योगाभ्यासवदेकतः ॥  
शब्दयते नान्यथा वैद्य उपायैः क्रोटिशैरपि ॥ २५ ॥

अर्थ—वैद्यको इस नाडीकी गती जाननेमें समर्थदोना केवल योगाभ्यासके सदृश नाडीदेखनेके अभ्याससेंही होसकताहै, अन्य करोंडो उपायोंसेंभी नाडी ज्ञान नहीं होता।

जलस्थलनभश्चारिजीवानां गतिभिः सह  
गतयो हुपभीयन्ते नाडीनां भिन्नलक्षणाः ॥ २६ ॥

अर्थ—जल, स्थल, और आकाशमें विचरनेवाले जीवोंकी गति (चाल) करके भिन्न लक्षण नाडियोंकी गति अनुमान करीजातीहै, अर्थात् जलचर जीव (जोंक, मेंडक आदि) स्थलचरजीव (सर्प, हंस, मोर आदि) और आकाश चारीजीव (लवा, बटेर, आदि) ए जैसें चलतेहै इनके सदृश नाडी चलतीहै, इनमें जिस दोषकी जैसी चाल नाडीकी लिखीहै उसको उसी प्रकारकी देखकर वैद्य नाडीको वातपित्तादिककी नाडी बतावे, अन्यथा नाडीका ज्ञानहोना कठिनहै ॥ २६ ॥

कस्य कीदृग्गतिस्तत्र विज्ञातव्या विचक्षणैः ॥  
अध्येतव्यं च तच्छास्त्रं सद्गुरोर्ज्ञानशालिनः ॥ २७ ॥

अर्थ—वैद्यहोनेवाले प्राणीको उचितहै कि उत्तम ज्ञानवान् शास्त्रके ज्ञातागुरुसैं किस जीवकी कैसी गतिहै इसको सीखे और जो इसनाडी विषयके ग्रंथहै उनको पढ़े, किसी जगे हमने ऐसा लिखा देखाहै कि दशवर्षतो वैद्यकके ग्रंथ पढे, और गुरुके आगे अनुभव (आजमायस) करे, क्योंकि यह विद्या पठनेका समय बहुत उत्तमहै, इस समय ग्रंथहै और रोगीदोनो उपस्थितहै जो ग्रंथमें पढे उसको गुरुके आगे रोगीपर परीक्षा करे, यदि जो वात समझमें न आवे तो उसको उसीसमय गुरुसैं पूछलेय तो संदेह निवृत्त होजावे, फिर दशवर्ष वनमें रहकर वनवासियोंसे अर्थात् माली, काढ़ी, भील, ग्वारिया, आदिसैं औपधका नाम और उसके गुण तथा परीक्षा सीखे तब इसको वैद्यक करनेका अधिकार होताहै ॥ २७ ॥

कल्याणमपि वारिष्टं स्फुटं नाडी प्रकाशयेत् ॥  
रुजां कालिकपौश्रिष्ठाङ्गवेत्सापि विलक्षणा ॥ २८ ॥

अर्थ—कल्याण (शुभ) और अरिष्ट (अशुभ) इन दोनोंको नाडी प्रत्यक्षप्रकाशित

करे है। तथा काल के वैशिष्ट्य करके रोग के समय नाड़ी विलक्षण हो जाती है ॥ २८ ॥

यल्क्षणा तु नैरुज्ये नोदितायां तथा रुजि ॥

वयः कालरुजां भेदैभिन्नभावं विभर्ति सा ॥ २९ ॥

अर्थ—जैसी आरोग्य पुरुषकी नाड़ी होती है ऐसी रोगावस्थामें नहीं रहती इसका यह कारण है कि अवस्था, काल, और रोगोंके भेदकरके नाड़ी भिन्न भावकों धारण करती है। अर्थात् विपरीतता ग्रहण करती है ॥ २९ ॥

तद्वस्थामतः प्राज्ञः सर्वथा सार्वकालिकीम् ।

ज्ञातुं यतेत मतिमान् लक्षणैः सुसमाहितः ॥ ३० ॥

अर्थ—इसीसे चतुर वैद्यको उचित है कि उस नाड़ीके सर्वकालकी सदैव लक्षणोंके जाननेका यत्न सावधानता पूर्वक करता रहे ॥ ३० ॥

नाड़ीके स्पंदनकाकारण ।

परिव्याप्याखिलं कायं धमन्यो ऋदयाश्रयाः । वहन्त्यः शो-  
णितस्त्रोतः शरीरं पोषयन्ति ताः ॥ ३१ ॥ ऋदयाकुञ्चना-  
द्रक्तं कियदुत्सुत्य धमनीम् । तत्सञ्चितं तदुत्थञ्च प्रविश्य  
चापरास्वपि ॥ ३२ ॥ ब्रजित्वा निखिलं देहं ततो विश्वाति  
फुफ्फुसम् । फुफ्फुसाङ्घृदयं याति श्रियैवं स्यात्पुनः पुनः  
॥ ३३ ॥ लधिरोत्पुववेगेन धमनी स्पन्दते मुहुः । उत्पुवप्र  
कृतेभेदाद्वेदः स्यात्स्पन्दनस्य च ॥ ३४ ॥ स्थौल्यादिकं ध-  
मन्याश्च तत्प्रकृत्यैव जायते । तत्प्रकारान्समासेन ब्रुवे वत्स !  
निशामय ॥ ३५ ॥

अर्थ—अब नाड़ीके चलनेका कारण कहते हैं कि हृदयके आश्रित धमनी नाड़ी सं-

? [वयःकाल रुजाभेदैः] इस लिखनेको यह प्रयोजन है कि जैसी नाड़ी वाल्यावस्थामें होती है ऐसी यौवन अवस्थामें नहीं और जैसी यौवन अवस्थामें होती है ऐसी वृद्धावस्थामें नहीं होती इसीप्रकार प्रातःकाल, मध्यान्ह और सायंकालमें पृथक् पृथक् भावसे चलती है तथा प्रत्येक रोगोंमें नाड़ीकी गति विलक्षण होती है। अर्थात् जैसी ज्वरवानको नाड़ी होती है ऐसी अतिसारवानको नहीं होती और जैसी अतिसारिकी होती है ऐसी ग्रहणीरोगवालेकी नहीं होती इत्यादि ।

पूर्णदेहमें व्यासहो रुधिरको स्रोतके द्वारा वहन करतीहै । उसी रुधिरके बहनेसे शरीरको पोषण करती है । उन संपूर्ण धमनी नाडियोंका आश्रय हृदयस्थ रक्ताधार यत्रहै, रक्ताधार यह एक स्थूलमांसनलिका ऊपरकी तरफ कुछ उठीहुईहै । यह नली समुदाय धमनी नाडीका मूलभागहै । इसी स्थानसे धमनी नाडियोंकी अनेक शाखा प्रशाखा निकलीहै ये संपूर्ण देहमें व्यासहै । इस समस्त सूक्ष्म नलाकृति मांसनलीका नाम धमनी है धमनी मार्गसे हृदयका संचित रुधिर सकलदेहमें परिभ्रमण करके देहका पोषण करता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

हृदययंत्र स्वभावसैंही सदैव खुलता मुदता रहताहै, जैसे भिस्तीकी सछिद्र जल-पूर्ण मसकको ऊपरसे दावनेसे उस मुसकके भीतरका जल जैसे छिद्रमें होकर बड़वेगसे निकलताहै, उसीप्रकार हृदयके मुदनेसे हृदयस्थ रुधिरका कितनाही अंश उछलकर तत्संलग्न स्थूल धमनीमें प्रवेश करे है । यह आकुञ्चन अर्थात् हृदयका मुदना जितनी देरमें होताहै उतने कालमें वहउत्पुत् रुधिर धमनियोंके द्वारा समस्त देहमें परिभ्रमण करके फुफ्फुसमें जायकर प्राप्त होताहै, फुफ्फुससे फिर दूसरीवार हृदयमें आताहै, और उसीप्रकार जाता है, जीतेहुए देहमें इसीप्रकार यह क्रिया एक नियमके साथ वारंवार होती रहतीहै; इस रुधिरके उत्पुत् (उछलने) से संपूर्ण धमनी स्पन्दन कहिये फड़कतीहै । रुधिर हृदयमेंसैं वारंवार उछलकर धमनीके छिद्रमें प्रवेश होकर वेगके साथ चलताहै, इसी कारण धमनी नाडीभी वारंवार तड़फतीहै । यह रुधिरके उत्पुत् प्रकृति भेदसे धमनीके तड़फमें भेद होताहै । [ अर्थात् यदि रुधिर मंदवेगसे उछले तो नाडी मंद प्रतीत होतीहै, और रुधिर शीघ्र उछले तो नाडीभी शीघ्र चारिणी होतीहै ] एवं रुधिरके स्वभावानुसार नाडीमें स्थूलता, सूक्ष्मता, और कठिनत्वादि धर्म उत्पन्न होताहै । अब जो जो अवस्था नाडीसे जैसे जैसे लक्षण होताहै उन सबको मैं आगे कहताहूँ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

नाडीके नाम ।

हिंसा स्त्रायुर्वसा नाडी धमनी धामनी धरा ।

तन्तुकी जीवितज्ञा च शिरा पर्यायवाचकाः ॥ ३६ ॥

अर्थ-हिंसा, स्त्रायु, वसा, नाडी, धमनी, धामनी, धरा, तन्तुकी, जीवितज्ञा, और शिरा, ये नाडीके पर्यायवाचकशब्द है, अर्थात् ए नाडीके नामांतर है ॥ ३६ ॥

नाडीके भेद ।

तत्र कायनाडी त्रिविधा । एका वायुवहा । अन्या ।

मूत्रविडस्थिरसवाहिनी । अपरा आहारवाहिनीति ॥ ३७ ॥

अर्थ—तहाँ देहकी नाडी तीन प्रकारकी है, एक पवनको वहती है दूसरी मल, मूत्र, हड्डी, और रसको वहती है। तीसरी आहारको वहती है ॥३७॥

**कन्दमध्ये स्थिता नाडी सुषुम्नेति प्रकीर्तिता ।**

**तिष्ठन्ते परितः सर्वाश्वक्रेस्मिन्नाडिकास्ततः ॥ ३८ ॥**

अर्थ—नाभीके मध्यमें सुषुम्ना नाडी स्थितहै, इसी नाभिचक्र और सुषुम्ना नाडीके चारोंतरफ संपूर्ण नाडी स्थितहै ॥३८॥

**नाभिमध्ये स्थितानाडी गोपुच्छाकृतिसर्वतः ॥**

**तिष्ठन्ते परितः सर्वास्ताभिर्व्याप्तिमिदं वपुः ॥ ३९ ॥**

अर्थ—संपूर्ण नाडी नाभिके बीचमें गोपुच्छके सदृश स्थितहो सर्वत्र फेल रही हैं। जिनसे यह देह व्यास होरहाँहे जैसे गौकी पूछ ऊपरके भागमें मोटी होती है और नीचेको क्रमसे पतली होती है, उसीप्रकार नाडीनको जानना ये सब नाभीसे निकल-कर चारोंतरफ फैल गई है ॥३९॥

**सार्वद्विकोटयो नाड्योहि स्थूलाः सूक्ष्माश्च देहिनाम् ॥**

**नाभिकन्दनिवद्धास्तास्तिर्यगूर्ध्वमधःस्थिताः ॥ ४० ॥**

अर्थ—इन मनुष्योंके देहमें छोटी और बड़ी सब मिलकर ३५००००००० साडेतीन करोड नाडी है, वो सब नाभिसे बंधीहुई तिरछी, ऊपर, और देहके अधींभागमें स्थितहै ॥४०॥

**तिस्रः कोटयोऽर्द्धकोटी च यानि लोमानि मानुषे ॥**

**नाडिमुखानि सर्वाणि धर्मविन्दून्क्षरन्ति च ॥ ४१ ॥**

अर्थ—ऊपरके क्षोकमें जो साडेतीन करोड नाडी कही है, वो मनुष्यके देहमें जित-ने रोमहै वो सब उन नाडियोंके मुखहै, उनसे पसीना झडता रहता है ॥४१॥

**द्विसप्तिसहस्रन्तु तासां स्थूलाः प्रकीर्तिताः ॥**

**देहे धमन्यो धन्यास्ताः पञ्चेन्द्रियगुणावहाः ॥ ४२ ॥**

अर्थ—उन साडेतीन करोड नाडियोंमें १०७२ एकहजार और बहक्षर स्थूल नाडी है, वो धमनी देहमें पवनको धमाती है। और पञ्चेन्द्रियोंके गुण ( शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ) को वहती है ॥४२॥

**तासांच सूक्ष्मसुषिराणि शतानि सत**

**स्वच्छानि यैरसकृदन्नरसं वहस्तिः ॥**

आप्यायते वपुरिदं हि नृणामभीषा-  
मभः स्त्रवद्विरिव सिन्धुशतैः समुद्रः ॥ ४३ ॥

अर्थ—उन पूर्वोक्त नाडीयोंमें छोटे छिद्रवाली स्वच्छ ७०० सातसौ नाडी हैं वी सब अन्नरसके वहनेवाली हैं, उस रसमें संपूर्ण देहका पोषण होता है जैसे सैकड़ों नदियोंके जलसे समुद्र तृप्त होता है ॥ ४३ ॥

आपादतः प्रततगात्रमशेषमेषा-  
मामस्तकादपि च नाभिपुरःस्थितैन ॥  
एतन्मृदङ्ग इव चर्मचयेन नद्धम्  
कायं नृणामिह शिराशतसतकेन ॥ ४४ ॥

अर्थ—नाभिस्थानस्थित सातसौं नाडीसे मस्तकसे ले पैरोंतक संपूर्ण देह व्याप्त है जैसे मृदंगमें सर्वत्र चर्मकी रसी खिची हुई होती है, उसीप्रकार मनुष्यकी देह इन सातसौं नाडीयोंसे बद्ध होरही है ॥ ४४ ॥

सतशतानां मध्ये चतुरधिका विंशतिः स्फुटास्तासाम् ॥  
एकां परीक्षणीया दक्षिणकरचरणविन्यस्ता ॥ ४५ ॥

अर्थ—पूर्वोक्त सातसौं नाडीयोंमें २४ चौबीस नाडी मुख्य है, उनमें भी पुरुषके दहने हाथ और पैरमें स्थित मुख्य एक नाडीकी परीक्षा करनी चाहिये “चतुरधीका” इसपदके कहनेसे यह प्रयोजन है कि धमनी नाडी चौबीस है जैसे लिखा है ॥ ४५ ॥

तिर्यक्कूर्मो देहिनां नाभिदेशे  
वामे वक्रं तस्य पुच्छन्तु याम्ये ॥  
ऊर्ध्वे भागे हस्तपादौ च वामौ  
तस्याधस्तात्संस्थितौ दक्षिणौ तौ ॥ ४६ ॥  
वक्रे नाडी द्वयं तस्य पुच्छे नाडी द्वयन्तथा ॥  
पञ्चं पञ्चं करे पादे वामदक्षिणभागयोः ॥ ४७ ॥

अर्थ—मनुष्योंके नाभिदेशमें तिरछा कूर्म (कछवा) स्थित है, वाँई तरफ उसका है और दहनी तरफ पूँछ है, ऊपरके भागमें वाँई तरफ हाथ है, और नीचे दक्षिण

१ शतानि सरा नाव्यस्तु कथितायाः शरीरिणाम् । संभूयां गुष्मूले तु शिरमेकामधिष्ठिता ।

पैरहै उस कच्छपके मुखमें दोनाडी, पूँछमें दो, और हाथ पैरोंमें दहनी और बाईं तरफ-  
पांच पांच नाडी जाननी ॥ ४६ ॥

फिर उसी लोककी व्याख्या करतेहैं “तासांमध्ये एकोति” इस पदलिखनेका यह  
प्रयोजनहै कि यद्यपि हाथ पैरोंमें पांच पांच नाडीहै परंतु उनमेंभी पुरुषके दहने हाथ पैरकी  
एक एक नाडी मुख्यहै और स्त्रीके वाम हाथ पैरकी एक एक नाडी मुख्यहै यह  
अर्थांशसें जाना जाताहै अतएव वैद्यकों इन्हींकी परीक्षा करनी चाहिये जैसे लिखा है ७४

वामे भागे स्त्रिया योज्या नाडी पुंसस्तु दक्षिणे ॥

इति प्रोक्तो मया देवि सर्वदेहेषु देहिनाम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—स्त्रीके वामभागकी ओर पुरुषके दहने भागकी नाडी देखे हेदेवि ! यह सर्व-  
देहधारियोंमें देखनेकी विधि मेने कहीहै, परंतु जो नपुंसक है उनमें प्रथम यह परीक्षा-  
करे कि यह स्त्री पंड है या पुरुषपंड पञ्चात् स्त्री पंडकी वामहाथकी ओर पुरुष पंडके  
दहने हातकी नाडी देखे इनमें समानता सर्वथा नहीं होसकती, और कृत्रिम (बनेहु-  
ए) हिंडे होतेहै उनकी नाडी यथा प्रकृतिमें स्थित होतीहै और “चरणोति” इस  
पदके धरनेसें कोई कहताहै कि वाम पैरकी नाडीको दहनी गांठके पिछाडीके पार्श्व-  
भागमें देखनी और दहने पैरकी नाडी बाईं ग्रन्थिके पिछाडीके पार्श्वमें देखनी यह  
श्रेष्ठपुरुषोंकी आज्ञाहै कोई छः स्थानोंकी नाडी देखना लिखताहै यथा ॥ ४८ ॥

अङ्गुष्ठमूले करयोः पादयोर्गुल्फदेशतः ॥

कपालपार्श्योः पङ्गभ्यो नाडीभ्यो व्याधिनिर्णयः ॥ ४९ ॥

अर्थ—हाथोंकी नाडी अंगुष्ठकी जड़में देखे, और पैरोंकी नाडी टकनाओंके नीचे  
देखे, बस्तककी नाडी दोनों कनपटीयोंमें देखे, इस प्रकार इन छः स्थानकी नाडी  
देखनेसें व्याधिका यथार्थ निर्णय होताहै ॥ ४९ ॥

नाभ्योष्टपाणिपात्कण्ठनासोपान्तेषु याः स्थिता ॥

तासु प्राणस्य सञ्चारं प्रयत्नेत विभावयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ—नाभी, होठ पैर, हाथ, कंठ, और नासिकाके समीप भागमें जो नाडी स्थितहै  
उनमें प्राणोंका संचारको यत्नपूर्वक जाने, अर्थात् इन स्थानोंमें सदैव प्राण पवनका  
संचार होताहै, इसीसे अत्यंत उपद्रवमें इन स्थानोंकी नाडी देखनी चाहिये ॥ ५० ॥

पाणिपात्कण्ठनासाक्षिकर्णजिह्वान्तमेद्रगाः ॥

वामदक्षिणतो लक्ष्याः षोडश प्राणबोधकाः ॥ ५१ ॥

अर्थ—हात, पैर कंठ, नासिका, नेत्र, कान, जिह्वाका अंत्यभाग और मेद्र (योनि-लिंग) इनके वामभाग और दक्षिणभागमें नाड़ी देखनी क्योंकि ए १६ नाड़ी प्राण-बोधक हैं ऐसा जानना ॥ ५१ ॥

कण्ठनाडी ।

आगन्तुकं ज्वरं तृष्णामायासं मैथुनं क्रमम् ॥

भयं शोकं च कोपच्च कण्ठनाडी विनिर्दिशेत् ॥ ५२ ॥

अर्थ—आगन्तुकज्वर, तृष्णा, परिश्रम, मैथुन, ग्लानि, भय, शोक, और कोप इतने रोगोंको कंठनाडी देखकर कहे ॥ ५२ ॥

नासानाडी ।

मरणं जीवनं कामं कण्ठरोगं शिरोरुजाम् ॥

श्रवणानिलजान् रोगान्नासानाडी प्रकाशयेत् ॥ ५३ ॥

अर्थ—मरण, जीवन, कामवाधा, कंठरोग, मस्तकरोग, कानके, और पवनके रोगोंको नासिकाकी नाड़ी प्रकाशित करती है ॥ ५३ ॥

उक्त नाडियोंका प्रमाण ।

हस्तयोश्च प्रकोष्ठान्ते मणिबन्धेऽङ्गुलिद्वयम् । पादयोनाडि-

कास्थानं गुल्फस्याधोऽङ्गुलिद्वयम् ॥ ५४ ॥ कण्ठमूलेऽङ्गु-

लिद्वन्दं नासायामङ्गुलिद्वयम् । एवमप्यङ्गुलिद्वन्द्वमग्रतः

कर्णरन्ध्रयोः ॥ ५५ ॥

अर्थ—अब अन्यनाडी किस किस भागमें है और वो कितनी बड़ी है यह कहते हैं। तहाँ दोनों हाथके प्रकोष्ठान्तमें जहाँ मणिबन्ध अर्थात् पहुचाहे उसजगे दो अंगुल नाड़ी देखनेका स्थान है और पैरोंमें टकनाके नीचे दो अंगुल नाड़ीका स्थान है तथा कंठकी

अर्थात् हस्तलीमें दो अंगुल एवं नासिकामें दो अंगुल नाड़ीका स्थान है। इसीप्री-  
दोनों कर्णके छिद्रके अग्रभागमें भी दो दो अंगुल नाड़ीके परीक्षाका स्थान हैं। तात्पर्य यह है कि जब हाथकी नाड़ी प्रतीत नहोवे तब इन स्थानोंकी नाड़ी देखनी ५५

निस्तुष्यव एकस्तत्प्रमाणाङ्गुलं स्थात्  
तदुभयमितसद्वन्येव नाडीप्रचारः ॥  
न भवति यदि तस्मिन् गेहिनी गेहमध्ये  
कथमिह गृहमेधी तत्र जीवस्तदा स्थात् ॥ ५६ ॥

अर्थ—छिलका रहित एक यवके प्रमाण इस जगे अंगुल माना है । ऐसे दो अंगुल प्रमाण स्थानमें नाडी रहती है यदि देहरूप घरमें नाडीरूप स्त्री न होवे तो जीवरूप जो गृहस्थी है सो क्याकरे, अर्थात् यावत्काल देहमें नाडी रहती है तबतक जीव है विना स्त्रीके घरमें रहना निंदित है “धिग्गृहं गृहिणीं विन” तात्पर्य यह है की जीव पुरुष, नाडी स्त्री अन्योन्यएकके विना दूसरा नहीं रह सकता ॥ ५६ ॥

परीक्षणीय ।

वातं पित्तं कफं द्वन्द्वं सन्निपातं तथैव च ।  
साध्यासाध्यविवेकश्च सर्वं नाडी प्रकाशयेत् ॥ ५७ ॥

अर्थ—वात पित्त कफ द्वन्द्व दोष और सन्निपात एवं साध्यासाध्य (चकारसैं कष्टसाध्य) इनकी संपूर्ण विवेचनाको नाडी प्रकाशित करती है ॥ ५७ ॥

इति श्रीमायुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण सङ्कलिते नाडीरूपेण प्रथमावलोकः ।

नाडीज्ञानसमय ।

प्रातः कृतसमाचारः कृताचारपरिग्रहम् ।  
सुखासीनः सुखासीनं परीक्षार्थमुपाचरेत् ॥ १ ॥

अर्थ—अब नाडी देखनेका समय कहते हैं कि चिकित्सक प्रातःकालमें प्रातःकृत्य-समाप्तिके अनन्तर नाडीपरीक्षार्थ रोगीके समीप प्राप्तहो रोगीके प्रातःकृत्य समाप्तिके पश्चात् उसको सुखपूर्वक बैठाकर इसीप्रकार स्वयं आप सुखपूर्वक बैठकर यथाविधान नाडी परीक्षा करे । इसजगे प्रातःकालका तो उपलक्षण मात्र है किंतु मध्यान्ह और सायंकालमें भी नाडीपरीक्षा करे जैसे लिखा है “मध्यान्हे चोष्णतान्विता” इत्यादि ॥ १ ॥

निपिद्धकाल ।

सद्यःस्नातस्य भुक्तस्य क्षुत्तृष्णातपसेविनः । व्यायामाक्रान्त-

देहस्य सम्यग् नाडी न बुध्यते ॥ २ ॥ तैलाभ्यक्ते रत्तेन्ते  
भोजनान्ते तथैव च । उद्देगादिषु नाडी च न सम्यग्वबुध्यते ॥ ३ ॥

अर्थ—तत्काल स्नान करा हो, तत्काल भोजन करा हो, अथवा “सुप्तस्य” अर्थात् निद्रित, क्षुधित, तृष्णात्त, गरमीसें घबड़ाया हुआ, तथा व्यायामद्वारा थकित देह जिसका ऐसे मनुष्यको नाडी भलेप्रकार प्रतीत नहीं हो उसीप्रकार जिसने तेल लगाया हो; मैथुनान्तमें भोजनके मध्यमें उद्देग आदि समयमें नाडीकी यथार्थगति निश्चय नहीं हो अतएव वैद्य इन समयोंमें नाडी परीक्षा न करे किंतु रोगीका चित्त जिससमय स्वस्थहोय तब नाडी देखे परंतु वातमूच्छादिक क्षणिक रोगोंमें यह उक्तनियम नहींहै ॥ २ ॥ ३ ॥

नाडीदेखने योग्य वैद्य ।

स्थिरचित्तः प्रसन्नात्मा मनसा च विशारदः ।

स्पृशेदङ्गलिभिर्नार्डिं जानीयादक्षिणे करे ॥ ४ ॥

अर्थ—अब नाडी देखने योग्य वैद्य कहते हैं कि जो स्थिरचित्त और प्रसन्न आत्मा तथा मनकरके चतुर ऐसा वैद्य तीन उंगलीयोंसें दहने हाथकी नाडीका स्पर्श करके उसकी गतीकी परीक्षा करे ॥ ४ ॥

मूढवैद्य ।

पीतमद्यश्चलात्मा मलमूत्रादिवेगयुक् ।

नाडीज्ञानेऽसमर्थः स्याल्लोभाक्रान्तश्च कामुकः ॥ ५ ॥

अर्थ—जिसने मद्य पीरखाहो, और चंचलचित्त, मल मूत्र वाधा लग रही हो, लोभी और कामीहो ऐसे वैद्यको नाडी न दिखावे, क्योंकि यह नाडीके जननमें असमर्थ है ॥ ५ ॥

नाडी देखने योग्य रोगी ।

त्यक्तमूत्रपुरीषस्य सुखासीनस्य रोगिणः ।

अन्तर्जानुकरस्यापि नाडी सम्यक् प्रबुद्धच्यते ॥ ६ ॥

अर्थ—अब नाडी देखनेके योग्य रोगी कहतेहैं, कि जो मलमूत्रका परित्याग

१ तैलाभ्यंगे च सुते च तथा च भोजनान्तरे । तथा न ज्ञायते नाडी यथा दुर्गतरा नदी इति पाठान्तरम् ।

करचुकाहो, और सुखपूर्वक घोड़ोंके भीतर हाथको करे सावधानीसे बैठाहो, ऐसे रोगीकी नाडीको वैद्य देखे, क्योंकि ऐसे मनुष्यकी नाडी भली रीतिसे जानी जाती है ॥ ६ ॥

नाडीदर्शनमें अयोग्य ।

**धूर्त्तमार्गस्थविश्वासरहिताज्ञातगोत्रिणाम् ।**

**विनाभिशंसनं वैद्यो नाडीद्रष्टु । च किल्वपी ॥ ७ ॥**

अर्थ—अब कहते हैं ऐसे मनुष्योंकी नाडी वैद्य न देखें, किं जो धूर्त है तथा मार्गमें चलते चलते दिखाने लगे, और जिनको विश्वास नहींहै तथा जिसकी जात पाँति वैद्य नहीं जाने, और विनकहे अर्थात् जबतक रोगी अथवा उस रोगीके बांधव न कहे तबतक वैद्य नाडी न देखें, यदि उक्तमनुष्योंकी वैद्य नाडी देखे तो पापभागी होता है ॥ ७ ॥

परीक्षाप्रकार ।

**सव्येन रोगधृतिकूर्परभागभाजा-**

**पीज्याथ दक्षिणकराङ्गुलिकात्रयेण ।**

**अङ्गुष्ठमूलमधिपञ्चिमभागमध्ये**

**नाडीं प्रभञ्जनगर्ति सततं परीक्षेत् ॥ ८ ॥**

अर्थ—अब नाडी परीक्षाका प्रकार लिखते हैंकी रोगके धारण करने वाली जो पहुचेंमें नाडीहै उसको दहने हाथकी तीन उंगली (तर्जनी, मध्यमा और अनामीका) से दावकर तथा रोगीके हाथकी कोहनीको दुसरे हाथसे अच्छी रीतिसे पकड़कर उसके अंगूठेकी जड़के नीचे वातगती नाडीकी वारंवार परीक्षा करे तात्पर्य यह है कि प्रथम दहने हाथसे कोहनीको पकड़े फिर वाहसे हाथकी हटाय नाडीको दावे, और वाए हाथसे रोगीके हाथकी साधकर नाडीकी परीक्षा करे ।

इसजगे “दक्षिणकराङ्गुलिकात्रयेण” यह पद केवल उपलक्षण मात्रको धरा है किंतु नाडी वामहाथसे भी देखे यदि ऐसा न मानोंगे तो फिर अपनी नाडीका देखना किसप्रकारहोगा । और वाजे वैद्य दहने हाथकी नाडी वामहाथसे और वामहाथकी दहनेसे देखते हैं यह ठीकहै ।

कदाचित् कोई शंकाकरे कि एकही हाथकी नाडी देखेनेसे रोग जानाजाता है फिर दोनों हाथकी देखना व्यर्थहै इसलिये कहते हैं कि बहुतसे मनुष्योंके वाम-

कंतादी निश्चाके होते हैं उत्तर के नहुन्योक वासनेगकी उत्तरक तादी नहुन्योक लोकाद उत्तरक यथार्थ इति नहुन्योक । इति वासनेक में उत्तर तादीके उत्तर योग्य एवं सेव होनाहै उत्तर कह योग्यहै इति लोकविश्वानभवते वैस्त्रेते है ॥ ४८ ॥

इति अन्तः ।

**इपाद्विनाभित्वरं वित्तताहुर्लीयं**

**ताहुप्रसारहितं परिपीडनेत ।**

**इपाद्वन्द्रहुतद्वपरवामभिग-**

**हस्ते प्रसारिततद्वुलित्तिके च ॥९॥**

**अकुट्टमूलपरिपक्षिमभागमध्ये**

**तादी प्रभञ्जनगतिं प्रथमं परिशेत् ॥१०॥**

अर्थ—वैद्य गोपीके हाथको किनिच्चात्र नवायकर और हाथकी बंगलीयके स्वरूप कर तथा उत्तरको बहुत लंबी न होनाडे और हाथ पड़ी जादिसे उत्तर के लंबानी पहिचानिके बंधनसे तादीकीणते उत्तरकालीहै तिर गोपीके झूपर (जो हनीके वासनाग ) को एक हैं जैसी और उनकी संवित्ताहित हाथको एक गोपीके लंगूलेके निलेनामें प्रथम तादीकी सीझा करे कारण यहहै कि जारी वाहका स्थानहै उत्तर यथा तादी परिशा करनी चाहिये ॥ ९ ॥ १० ॥

**प्रद्वयेदोपनिगरन्तद्वुपं**

**व्यस्तं तमस्तं युगलीकृतं च**

**द्विकस्त्य तु धर्मस्य विमोहितस्य**

**दीपप्रभावा इव जीवनादी ॥११॥**

अर्थ—यह जीवनादी गोपीके दूषके और मोहिद्वयेके दृश्यक् दृश्यक् और तथा द्विक दृश्योक्या जो निजस्वरूपहै उत्तरकी दिवातीहै, जैसे दीपक लप्ते प्रकाशक दृष्टे स्थित द्वायको दिखातीहै ॥ ११ ॥

**चीणां भिपवामहस्ते वासे पादे च यन्तः । शास्त्रेण संप्रदायेन**  
**तथा स्वातुभेदेन च ॥ परिशेषद्वत्तवचासावन्यासादेव ज्ञायते ॥१२॥**

अर्थ—वैद्य विद्यके विशेष और विमर्शमें तादीकी संवदायते और अर्द्धनक्षाप रत्नके उपान तादी प्राप्तिकर, यह परिशा केवल अस्यात्तस्य

तात्पर्य यह है कि जैसे जोहरी रत्नपरीक्षामें अभ्यास करनेसे रत्नकी परीक्षा करताहै उसीप्रकार इस नाडीका देखनाभी रत्नपरीक्षाके समानहै, अतएव इसके देखनेमें वैद्य अभ्यासकरे ॥ १२ ॥

**करस्याङ्गुष्ठमूले या धमनी जीवसाक्षिणी ।**

**तच्चेष्ट्या सुखं दुःखं ज्ञेयं कायस्य पण्डितैः ॥ १३ ॥**

**प्रभञ्जनगतिर्थं इति नाड्यन्तरनिरासः सततम् इति  
सुस्थदशायामपि परीक्षणीया ।**

अर्थ-तहां नाडीदेखनेका स्थान कहतेहै, जैसेकि हाथके अंगूठेकी जडमें जो जीव-साक्षिणी धमनी नाडीहै उसकी चेष्टा करके इसप्राणिके देहका सुख दुःख वैद्यजन जाने, ८ के श्लोकमें “प्रभञ्जनगतिर्थं” इस लिखनेसे यह सूचनाकरी कि अंगूठेके सं-निकट नाडीको देखनी अन्य नाडियोंको न देखना तथा “सततं” इस पदके ध-रनेसे यह प्रयोजनहै कि वैद्य रोगावस्थाहीमें नाडी न देखे किंतु स्वस्थ दशामेंभी नाडीकी परीक्षाकरे. कारणकि जिसकी नाडी स्वस्थावस्थामें देखीहै यदि उसके रोग प्रगटहोनेवाला होवेतो उस रोगका निश्चय नाडीद्वारा बहुत सुगमतासे होसकताहै इसीसे लिखा है यथा ॥ १३ ॥

**भाविरोगावबोधाय सुस्थनाडीपरीक्षणम् ॥ १४ ॥**

अर्थ-अर्थात् होनहार रोगज्ञानके अर्थ वैद्यको स्वस्थ (रोगरहित) मनुष्यकी नाडीपरीक्षा करनी चाहिये ॥ १४ ॥

**स्पर्शनादिभिरभ्यासान्नाडीज्ञो जायते भिषक् । तस्मात्परामृ-  
शेन्नाडीं सुस्थानामपि देहिनाम् ॥ १५ ॥ स्पर्शनात्पीडना-  
द्वातादेदनान्मर्दनादपि । तासु जीवस्य सञ्चारं प्रयत्नेन नि-  
रूपयेत् ॥ १६ ॥**

अर्थ-ग्रन्थान्तरमें लिखा है कि स्पर्शनादिके अभ्याससे अर्थात् प्रत्येककी नाडी देखनेसे यह वैद्य नाडीका ज्ञाता होताहै अतएव यह वैद्य स्वस्थ मनुष्योंकीभी नाडी देखाकरे उस नाडीके स्पर्शसे, पीडन (दावने) से, घातसे (अंगलियोंमें लगनेसे

१ यद्यास्ति नाडी सर्वत्र शरीरे धातुवाहिनी । तथाप्यङ्गुष्ठमूलस्था करस्या सर्वशोभना ॥ १ ॥ विलसति मणिरन्त्रे ग्रन्थिरङ्गुष्ठमूले तदभरणमिताभि रुयङ्गुढीभिर्निपिण्ड्य । सफुर-  
णमसल्लदेषा नाडिकायाः परीक्षा पदमनुवृट्टिकाधीङ्गुष्ठमूले तथैव ॥ २ ॥

वेदन ( तडफे ) से और मर्दनकरना इन कारणोंसे वैद्य उन नाडियोंके जीवसंचार-  
को निहृपण करे ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥

**गुरुतोऽत्र प्रयत्नेन वैद्येन शुभमिच्छता ।**

**ज्येष्ठेनाङ्गुष्ठमूलेन नाडीपुच्छं परीक्षयेत् ॥ १७ ॥**

अर्थ—यशेच्छु वैद्य यत्नपूर्वक गुरुसे अर्थात् गुरुद्वारा अंगूठेकी जडेमें नाडीपुच्छकी परीक्षाकरे, तात्पर्यार्थ यहै कि जो वैद्य अपने हितकी चाहना करे वो गुरुद्वारा नाडीपरीक्षा सीखे स्वयंही न देखनेलगे ज्येष्ठ कहनेसे अंगूठेका बृहन्निम्नभाग जानना ॥ १७ ॥

**नाडीं वायुप्रवाहेन शास्त्रं हृष्टा च बुद्धिमान् ।**

**गुरुपदेशं संस्मृत्य परीक्षेत मुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥**

अर्थ—बुद्धिमान् वैद्य पवनके संचारकरके और शास्त्रके अनुसार तथा गुरुके उपदेश-  
को स्परणकर बारबार नाडीकी परीक्षा करे ॥ १८ ॥

**वारत्रयं परीक्षेत धृत्वा धृत्वा विमुच्य च ।**

**विमृद्धय बहुधा बुद्ध्या रोगव्यक्तिं तु निर्दिशेत् ॥ १९ ॥**

अर्थ—बारबार नाडीपर ऊँगलिरखे और हटायले अर्थात् नाडीको कुछ दबाय-  
के ढीली छोड़देवे इसप्रकार करनेसे नाडीकी सबलता और निर्वलता चौडाव लंबा-  
व तथा शीघ्रता और मंदताका ज्ञान होताहै । इस प्रकार तीनबार परीक्षाकर संपूर्ण  
नाडीकी व्यवस्था अपने मनमें विचारकर फिर रोगव्यक्ति कहे अर्थात् इसरोगीके  
देहमें असुक रोगहै ऐसै विना विचारे न कहे ॥ १९ ॥

**अङ्गुलित्रितयैः स्पृष्टा क्रमादोषत्रयोऽद्वैः ।**

**मन्दां मध्यगतां तीक्ष्णां त्रिभिर्दोषैस्तु लक्षयेत् ॥ २० ॥**

अर्थ—नाडीको तीनऊँगलियोंके स्पर्शसे तीनोदोषोंकरके मन्द, मध्य, और तीक्ष्ण  
गति जाननी, अर्थात् प्रथम ऊँगलीमें मध्यस्पर्शहोनेसे वातकी, और वीचकी ऊँगलीमें  
तीक्ष्णस्पर्श होनेसे पित्तकी, और अंतकी ऊँगली ( अनामिका ) में मंदस्पर्शहोनेसे  
कफकी नाडी जाननी ॥ २० ॥

**रोगरहितमनुष्यकीनाडी ।**

**भूलता भुजगप्राया स्वच्छा स्वास्थ्यमयी शिरा ।**

**सुखितस्य स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती मता ॥ २१ ॥**

अर्थ—स्वस्थ अवस्थाकी नाड़ी केंचुआ, और सर्पके समान टेढ़ीगतिसे और पुष्ट तथा जड़ता रहित होती है यह नैरोग्य पुरुषकी नाड़ीके लक्षण है तथा सुखी पुरुषकी नाड़ी स्थिर और बलवान् होती है ॥ २१ ॥

नाड़ीके देवता ।

वातनाडी भवेत् ब्रह्मा पित्तनाडी च शंकरः ।

श्वेष्मनाडी भवेद्द्विष्णुस्त्रिदेवा नाडीदेवताः ॥ २२ ॥

अर्थ—वातनाडीका ब्रह्मा, पित्तनाडीका शंकर, और कफनाडीका पति विष्णु है ॥ २२ ॥  
नाडीन्के वर्ण ।

वातनाडी भवेन्नीला पित्तनाडी तु पाण्डुरा ।

श्वेता तु कफनाडी स्त्यादेवं वर्णानि संबदेत् ॥ २३ ॥

अर्थ—वातकी नाडीका वर्ण नील है, पित्तकी नाडीका पीला, कफनाडीका श्वेत, इसप्रकार नाडीके वर्ण कहने चाहिये ॥ २३ ॥

नाडीन्का स्पर्श ।

पित्तनाडी भवेदुष्णा कफनाडी तु शीतला ।

वातनाडी भवेन्मध्या एवं स्पर्शविनिर्णयः ॥ २४ ॥

अर्थ—पित्तकी नाडी स्पर्शकरनेसे गरम प्रतीत होती है, कफकी नाडी शीतल, और वातकी नाडीका स्पर्श मध्यम होता है इसप्रकार नाडीका स्पर्श जानना ॥ २४ ॥  
कालपरत्व नाडीकी गति ।

प्रातः स्त्रिग्रन्थमयी नाडी मध्याह्ने चोषणतान्विता ।

सायाह्ने धावमाना च रात्रौ वेगविवर्जिता ॥ २५ ॥

अर्थ—स्वभावसे ही नाडी प्रातःकाल स्त्रिग्रन्थ, मध्याह्नमें उष्ण, और सायंकालमें वेगवर्ती, तथा रात्रिमें वेगवर्जित होती है ॥ २५ ॥

अथ वातादिस्वभावक्रम ।

आदौ च वहते वातो मध्ये पित्तं तथैव च ।

अन्ते च वहते श्वेष्मा नाडिकात्रयलक्षणम् ॥ २६ ॥

अर्थ—अब वातादिका स्वभाव क्रम कहते हैं, जिससमय वैद्य कोहनीको पकड़ता हैं ।  
उसके द्वितीयक्षणमें प्रथम वातकी नाडी फिर मध्यमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी

२ चिराद्वोगविवर्जिते ते पाठान्तरम् ।

चलतीहै । यह द्वितीयादिक्षणोंमें जाननी कोई कहताहै कि आदिमें वातकी बीचमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी चलतीहै यह वात सर्वथा निर्मूलहै क्योंकि स्थानका नियम किसी जगे नहीं करा, विशेष आगे कहते हैं यथा ॥ २६ ॥

उक्तश्लोकका विरोधीविचन ।

आदौच वहते पित्तं मध्ये श्वेषमा तथैव च ।

अन्ते प्रभञ्जनो ज्ञेयः सर्वशास्त्रविशारदः ॥ २७ ॥

अर्थ—आदिमें पित्तकी मध्यमें कफकी और अंत्यमें वातकी नाडी सर्वशास्त्रज्ञाता वैद्योंकरके जाननी ॥ २७ ॥

### नाडीचक्रमिदम्

वात	पित्त	कफ	नाडीके नाम
इयाम हरित	पीत लाल नील	सपेद	नाडीके वर्ण
ब्रह्मा	शीब	विष्णु	नाडीके देवता
न गरम न शीत ल किंतु मध्यम	गरम	शीतल	नाडीका स्पर्श
विषम	दीर्घ	हस्त	नाडीमाप
गंधहीन	तीव्रगंध	मध्यमगंध	नाडीका गंध
तिर्यगगमन	ऊर्ध्वगमन	अधोगमन	नाडीका गमन
हलकी	हलकी	भारी	नाडीका गुरुता और लघुता
रात्रिदिवावली	दिवावली	रात्रिवली	नाडीके बलवा नहोनेका समय

उक्तशोकका पुष्टिकर्त्ता दृष्टान्त ।

तृणं पुरस्सरं कृत्वा यथा वातो वहेद्वली । शेषस्थं च तृणं गृ-  
ह्य पृथिव्यां वक्रगो यथा ॥ २८ ॥ एवं मध्यगतो वायुः  
कृत्वा पित्तं पुरस्सरम् । स्वानुगं कफमादाय नाड्या वहति  
सर्वदा ॥ २९ ॥

अर्थ—इस वाक्यको दृष्टान्त देकर पुष्ट करते हैं कि जैसे प्रबलवात अर्थात् आंधी, तिनकाओंको अगाड़ी करके और कुछ पिछाड़ीके तिनकाओंको लेकर आप बीचमें टेढ़ी होकर चलती हैं । इसीप्रकार मध्यगत वायु पित्तको अगाड़ीकर और अपने पिछाड़ी कफको करके बीचमें आप टेढ़ी होकर चलती हैं ॥ २८ ॥ २९ ॥

अतएव च पित्तस्य ज्ञायते कुटिला गतिः । वक्रा प्रभञ्जन-  
स्यापि प्रोक्ता मन्दा कफस्य च ॥ ३० ॥ पित्ताग्रेऽस्ति ग-  
तिः शीघ्रा तृणस्थेति विवृश्यताम् । मन्दानुगस्य वक्रा वै  
मारुतो मध्यगस्य ह ॥ ३१ ॥ तथात्रैव च ज्ञातव्या ग-  
तिर्दोषत्रिकोद्धवा । नान्यथा ज्ञायते स्नायुगतिरेतद्विनिश्चि-  
तम् ॥ ३२ ॥

अर्थ—इसीसैं नाडीमें पित्तकी गति कुटिलहै, और वातकी गति टेढ़ी एवं कफकी मन्दगति प्रतीत होतीहै । पित्तकी शीघ्रगति सो आंधीमें तृणके देखनेसैं प्रत्यक्ष होतीहै । और जैसैं आंधीमें पिछाड़ीके तृणकी मंदगति होतीहै उसीप्रकार नाडीमें पिछाड़ी कफकी मंदगति है । और जैसैं आंधीके बीचमें पवनकी गति टेढ़ी तिरछी होती है । उसीप्रकार इसनाडीके बीचमें वातकी गति टेढ़ी तिरछी प्रतीत होती है इस प्रकार ही नाडीकी गति प्रतीत होतीहै । अन्यप्रकारसैं नहीं ॥ ३० ॥

परंतु हमको शंकाहैकि नाडीका और आंधीका क्या संबंधहै, क्योंकि आंधीमें आगे पीछे और बीचमें पवनही कहातीहै, परंतु नाडीमें तो न्यारे न्यारे दोपहै, जैसैं वात पित्त, तथा कफ, और पवनका एकहीकर्महै परंतु इन तीन्यों दोपोंके कर्म पृथक् पृथक् है इस कारण यह दृष्टान्तही असंभवहै हमारे मनको हरण कर्ता नहींहै ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

ग्रंथकर्त्ताका मत

इह तीनि कथयिष्यामि स्वमतं ज्ञास्त्रसंमतम् । मिथ्यारोपित-

वादस्य खण्डनं लोकरञ्जनम् ॥ ३३ ॥ वातमध्रे वदन्त्येके  
पित्तमध्रे च केचन । हास्यास्पदमिदं सर्वं नतु सत्यं मना-  
गपि ॥ ३४ ॥

अर्थ—अब हम शास्त्रसंमत तथा मनुष्योकी रंजना ( प्रसन्नता ) को और मिथ्यारो-  
पित वादका खण्डनरूप अपने मतको कहते हैं । जैसे कोई वातकी, और कोई पित्त  
की नाडीको आगे बतलाताहे यह केवल उनके हास्यका स्थानहै किंतु किंचिन्मात्रभी  
सत्य नहीं है इसप्रकार माननेसे बड़भारी अनर्थ होता है जैसे आगे लिखते हैं ॥ ३४ ॥

सति पित्तभवे व्याधौ बुद्धयतिक्रमतो यदि । वातकोपव-  
शादेवमादौ ज्ञात्वा धरागतिम् ॥ ३५ ॥ प्रददेहेषजं हुण्णं  
तदोषविनिवृत्तये । तदा तूनं भवेन्मृत्युः पित्तकोपेन  
भूयसा ॥ ३६ ॥

अर्थ—कदाचित् किसीरोगीके पित्तकी व्याधिहोवे और वैद्यबुद्धिभ्रमसे वातकोपकी  
नाडी अग्रभागमें समझकर उस रोगीको दोष दूर करनेको उस उष्ण ( शुक्रादि )  
औषध देय तो कही एकतो पित्तदोषकी गरमी और दूसरे गरम ही दीनी औषध  
अब कही वह रोगी पित्तकी गरमीके मारे मरेगा कि बचेगा? किंतु अवश्यही मरेगा ।

सति वातभवे व्याधौ बुद्धयतिक्रमतो यदि । नाडीगर्ति  
पित्तवशादादौ ज्ञात्वा ततो भिषक् ॥ ३७ ॥ प्रददेहेषजं  
शीतं तदोषविनिवृत्तये । तदा तूनं भवेन्मृत्युर्वातकोपेन  
भूयसा ॥ ३८ ॥

अर्थ—इसीप्रकार रोगीके देहमें वातजन्य रोगहोय और वैद्यबुद्धिके भ्रमसे पित्तकी  
नाडी जानकर यदि उसरोगीको पित्तनाशक शीतल उपचार करे तो कहो अत्यंत शरद  
औषधसे रोगी सरदीके मारे मरेगा या बचेगा? किंतु अवश्यही मरेगा ॥ ३७—३८ ॥

अत्याश्र्वर्यमिदं लोके वर्तते दृश्यतां यथा । वदन्त्येवोऽलवा-  
रांशि केऽपि रांशि दिनं तथा ॥ ३९ ॥ एवं स्वेच्छापिङ्गसमय

न स्वल्पलोभेन मानवाः । रोगिणां सुप्रियान् प्राणान्हरन्ति  
ज्ञानवर्जिताः ॥ ४० ॥

अर्थ—इस संसारमें अत्यंत आश्वर्यहै देखो कोई दिनको रात्रि और कोई रात्रिको दिन कहता है । इसप्रकार अपनी अपनी इच्छानुसार बकते हैं और ए मूर्ख वैद्य थोड़ेसे लोभके कारण रोगियोंके परमप्रिय प्राणोंको हरण करते हैं । कहो इनसें बढ़कर कौन यामरहै जो विना विचारे अन्तर्थ करते हैं भाई यह वैद्यविद्या खेल नहींहै ॥ ४० ॥

अत एवं मया चित्ते सर्वमानीय तत्त्वतः । कथ्यते नास्ति  
नास्तीह नाडीस्थानविचारणा ॥ ४१ ॥ किन्तु नाडीगतिः  
श्रेष्ठा शास्त्रकारैः प्रकीर्तिता । न च तत्रहि सन्देहो लेश  
मात्रोऽपि विद्यते ॥ ४२ ॥ तत्प्रकारोप्ययं ज्ञेयः सावधानत-  
या किल । यथा सर्पजलौकादिगतिर्वातस्य गद्यते ॥ ४३ ॥  
न तत्र कुरुते कोऽपि पित्तश्लेष्मभवं ब्रमम् । कुलिङ्गकाक-  
मण्डूकगतिः पित्तस्य कीर्त्यते ॥ ४४ ॥ न तत्र कोऽपि कु-  
रुते वातश्लेष्मभवं ब्रमम् । कपोतानां मयूराणां हंसकुक्त-  
टयोरपि ॥ ४५ ॥ या गतिः सा च विजेया कफस्यैव गति-  
र्वृभिः । न तत्र कोऽपि कुरुते वातपित्तभवं ब्रमम् ॥ ४६ ॥

अर्थ—इन ऊपरकहेहुए सर्वकारणोंको अपने चित्तमें भलेप्रकार विचारकर हम कहते हैं कि नाडीके जो आदि मध्य और अंत्य ये स्थान किसीने कहे हैं सो नहीं हैं नहीं हैं । तो क्याहै? इसलिये कहते हैं कि नाडीकी जो गति है वो सत्यहै क्योंकि इसमें सर्वयथकर्त्ताथोंकी संमतिहै और इसमें लेशमात्रभी संदेह नहींहै, उसप्रकारको तुम सावधानताकरके सुनो, जैसैं सर्प और जोककी गति वातकीहै इसमें कोई ब्रम नहीं करे कि यह पित्तकी नाडीहै या कफकी उसीप्रकार कुरुंग काक और मण्डूककी गति पित्तकीहै इसमें वात तथा कफकी नाडीका कोई ब्रम नहीं करता, इसीप्रकार कपोत, मोर, हंस, और कुकुट इनकी जो गतिहै वह कफकीहै इसमें कोई यह नहीं कि ये गति कफकी नहींहै वातपित्तकी है, इसीसैं हमारातो सही सिद्धांतहै कि स्थान असत्य और गति सत्यहै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

वातादिकोंकी क्रमसे गति ।

**वाताद्वक्षगता नाडी चपला पित्तवाहिनी ।**

**स्थिरा श्वेषमवती ज्ञेया मिथ्रिते मिथ्रिता भवेत् ॥ ४७ ॥**

अर्थ—वात तिरछी वहती है, अतएव वातकी नाडी टेढ़ी चलती है, अग्रि चंचल हो ऊपरको जाती है अतएव पित्तकी नाडी ऊपरकी तरफ वहती है और चपल है, जल नीचेको जाता है, इसीसे प्रवल नहीं है अतएव कफकी नाडीभी स्थिर है और जो मिथ्रित नाडी है उनकी गतिभी मिलीहुई होती है । इससे यह दिखाया कि द्विदोषजमें दोदोषके चिन्ह होते हैं, त्रिदोषमें तीनों दोषोंके चिन्ह होते हैं, कदाचित् कोई प्रश्नकरेकि एकही नाडी चपल और स्थिर कैसे हो सकती है ? इससे कहते हैं कि समय भंद होनेसे दोनों गति हो सकती है ॥ ४७ ॥

वातादीकी विशेषगति ।

**सर्पजलौकादिगतिं वदन्ति विदुधाः प्रभञ्जने नाडीम् ।**

**पित्ते च काकलावकभेकादिगतिं विदुः सुधियः ॥ ४८ ॥**

**राजहंसमयूराणां पारावतकपोतयोः ।**

**कुक्कुटादिगतिं धत्ते धमनी कफसंवृता ॥ ४९ ॥**

अर्थ—सर्प और जोखकी गति पंडितजन वातकी नाडीकी गति कहते हैं अर्थात् जैसे सर्प और जोख टेढ़े तिरछे होकर चलते हैं उसीप्रकार वादीकी नाडी चलती है । आदि शब्दसे विछूकी गतिका ग्रहण है । उसी प्रकार पित्तमें काक कौआ लावक (लवा) और भेद (मैंडका) की गतिके सदृश नाडी चलती है अर्थात् जैसे कौआ, लवा, और मैंडका भुदकते उछलते चलते हैं उसी प्रकार पित्तकी नाडी चलती है । आदिशब्दसे कुर्लिंग और चिंडा आदिकी गतिका ग्रहण है । एवं राजहंस (वतक) मोर, खबुतर, रुपोत (पिंडुकिया) और मुरगा इन पक्षियोंकीसी अर्थात् ए पक्षी जैसे मंदमंद गति

है इसप्रकार कफकी नाडी चलती है । आदिशब्दसे हाथी और उत्तम स्त्रीकी अग्रहण है अर्थात् जैसे हाथी और उत्तम स्त्री झूमती हुई मंद मंद चलती है नाडी जानकफकी नाडी चलती है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

आौषधसे रोग,

द्वंद्वजनाडीकी चाल ।

**अत्याश्वर्थतिं नाडीं शुहुभैकगतिं तथा । वातपित्तद्वयोद्दु-**

**रात्रिं केऽविचक्षणाः ॥ ५० ॥ भुजगादिगतिश्वैव राज-**

हंसगतिं धराम् । वातश्लेष्मसमुद्धूतां भाषन्ते तद्विदो जनाः ॥ ५१ ॥ मण्डूकादिगतिं नाडीं मयूरादिगतिं तथा । पित्त-श्लेष्मसमुद्धूतां प्रवदन्ति महाधियः ॥ ५२ ॥

अर्थ—चारबार सर्पगति (टेढी) और चारबार मेंडकाकी गति (उछलती) नाडी चले उसको चतुरवैद्य वातपित्तकी नाडी कहते हैं । तथा कभी सर्पगति और कभी राजहंसकी गतिसे नाडी चले उसको पंडितजन वातकफकी नाडी कहते हैं । एवं कभी मेडक और कभी मांरकी चाल चले उस नाडीको पित्तकफकी शुद्धि वान् वैद्य कहते हैं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

प्रकारान्तर ।

वातेऽधिके भवेन्नाडी प्रव्यक्ता तर्जनीतिले । पित्ते व्यक्ता मध्यमायां तृतीयाङ्गुलिगा कफे ॥ ५३ ॥ तर्जनीमध्यमा-मध्ये वातपित्ताधिके स्फुटा । अनामिकायां तर्जन्यां व्य-क्ता वातकफे भवेत् ॥ ५४ ॥ मध्यमानामिकामध्ये स्फुटा पित्तकफेऽधिके । अङ्गुलित्रितयेऽपि स्यात्प्रव्यक्ता सान्निपा-ततः ॥ ५५ ॥

अर्थ—वाताधिक्य नाडी तर्जनीके नीचे चलती है । पित्तकी नाडी मध्यमा ऊंगलीके नीचे । और कफकी नाडी तीसरी ऊंगली अर्थात् अनामिकाके नीचे चलती है । वातपित्तकी नाडी तर्जनी और मध्यमाके नीचे चलती है । वातकफकी नाडी अनामिका और तर्जनीके नीचे चलती है । मध्यमा और अनामिकाके नीचे पित्तकफाधिक नाडी चलती है । और तीनों ऊंगलियोंके नीचे सन्निपातकी नाडी गमन करती है ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

वक्रमुत्प्रृत्य चलती धमनी वातपित्ततः । वहेद्वक्खमन्द्वच्च वातश्लेष्माधिकं त्वचः ॥ ५६ ॥ उत्प्रृत्य मन्दं चलति नाडी पित्तकफेऽधिके ।

अर्थ—वातपित्ताधिक्यसे नाडी टेढी और उछलती हुई चलती है । वातकफसे टेढी और मन्दगमनकरती है पित्तकफाधिक्यमें नाडी उछली हुई मंद गमन करती है ॥ ५६ ॥

उत्तरोत्तर मंद पडजावे ऐसी नाडीको नाडीके ज्ञाता साध्य नहीं कहते, किंतु असाध्य कहते हैं ॥ ६४ ॥

**यात्युच्चा च स्थिरात्यन्ता या चेयं मांसवाहिनी ।**

**या च सूक्ष्मा च वक्त्रा च तामसाध्यां विदुर्बुधाः ॥ ६५ ॥**

अर्थ—जो नाडी अत्यंत ऊँची, अत्यंत स्थिर और जो मांसवाहिनी कहिये मांसाहारकरनेसे जैसी चले ऐसी चलने लगे और जो अत्यंत सूक्ष्म, और टेढ़ीही उसको वैद्यजन असाध्य कहते हैं ॥ ६५ ॥

असाध्यनाडीका परिहार ।

**भारप्रवाहमूर्च्छा भयशोकप्रमुखकारणान्नाडी ।**

**संमूर्च्छतापि गाढं पुनरपि सा जीवनं धते ॥ ६६ ॥**

अर्थ—अत्यंत बोझाके उठानेसे, अथवा विपवेग धाराके बहनेसे, रुधिरदेखनेके कारण जो मूर्छित हो गया हो राक्षसादि दर्शनकरके भयभीततासे धनपुत्रादि नष्ट होनेके शोकसे जो नाडी अत्यंत स्पन्दरहितभी हो गई हो फिरभी साध्यताको प्राप्त होती है कोई भावप्रवाह ऐसा पाठमानता है सो असत है ॥ ६६ ॥

**पतितः सन्धितो भेदी नष्टशुक्रश्च यो नरः ।**

**शास्यते विस्मयस्तस्य न किञ्चिन्मृत्युकारणम् ॥ ६७ ॥**

अर्थ—जो उच्चस्थानादिसे गिरा हो, हड्डी आदिके जोडनेसे, अतीसार रोग वाला, जिसके यक्षमा आदि रोगके कारण अथवा रमणकरनेके कारण शुक्रक्षीण हो गया हो, ऐसे पनुप्योंकी यदि नाडी अत्यंत क्षीणभी हो गई हो तथापि मृत्युका कारण नहीं है, अर्थात् असाध्यके विस्मयको दूर करते हैं ॥ ६७ ॥

**तथा भूताभिषङ्गेऽपि त्रिदोषवदुपस्थिता । समाङ्गा वहते नाडी**  
**तथा च न क्रमंगता । अपमृत्युर्न रोगाङ्गा नाडी तत्सन्निपातवत् ॥ ६८ ॥**

अर्थ—एवं भूताभिषङ्ग अर्थात् भूतप्रेतबाधामें यदि नाडी सन्निपातके सदृश चले तथा वह नाडी वात पित्त कफ स्वभावक्रमवाली हो किंतु वे क्रम न होय तौ उस सन्निपातके सदृश नाडीसे भी मृत्युका भय नहीं है ॥ ६८ ॥

**स्वस्थानहीने शोके च हिमाक्रान्ते च निर्गदाः ।**

**भवन्ति निश्चला नाड्यो न किञ्चित्तत्र दूषणम् ॥ ६९ ॥**

अर्थ—उच्चस्थानसे गिरनेसे शोक और हिम (बर्फ कोहल आदिकी शरदी)

सैं यदि नाडी निश्चल होय फिरभी प्रगट होय इस्से मृत्यु शंकाका भय नहीं है इस छोकमें “निर्गदा” जो पढ़है सो असंगतहै। क्योंकि निर्गदा नाडीभी निश्चला होतीहै ॥ ६९ ॥

**स्तोकं वातकफं जुष्टं पितं वहति दारुणम् ।**

**पित्तस्थानं विजानीयाद्वेषजं तस्य कारयेत् ॥ ७० ॥**

अर्थ—किञ्चिन्मात्र वातकफयुक्त और पित्त जिसमें प्रबल होय तो उस रोगिका यत्र करना चाहिये, वो असाध्य नहींहै ॥ ७० ॥

**स्वस्थानच्यवनं यावद्धमन्या नोपजायते ।**

**तावच्चिकित्सा सत्वेऽपि नासाध्यत्वमिति स्थितिः ॥ ७१ ॥**

अर्थ—जवतक नाडी स्वस्थान कहिये अंगुष्ठमूलसैं च्युत न होय, तावत्कालतक चिकित्सा करे यह असाध्य नहींहै ॥ ७१ ॥

प्रसङ्गवशकालनिर्णय कहतेहै

**भूलता भुजगाकारा नाडी देहस्य संक्रमात् ।**

**विशीर्णा क्षीणितां याति मासान्ते मरणं भवेत् ॥ ७२ ॥**

अर्थ—कभी नाडी केंचुऐके सदृश कृश और टेढ़ी चले, कभी सर्पके समान पुष्ट बलयुक्त और तिरछी चले, तथा कभी अलक्ष और अतिकृशतापूर्वक गमनकरे एवं कभी देह सूजन आदिसैं स्थूल होजावे और कभी कृशहो जाय तो वह रोगी दूसरे महिनेमें मरे ॥ ७२ ॥

**क्षणाद्वच्छति वेगेन शान्ततां लभते क्षणात् ।**

**सप्ताहान्मरणं तस्य यद्यज्ञे शोथवर्जितः ॥ ७३ ॥**

अर्थ—कभी नाडी जल्दी चले कभी चलनेसैं रहि जावे और देहमें शोथ होय नहीं, तो उस प्राणीकी सातादिनमें मृत्यु होय ॥ ७३ ॥

**निरीक्षा दक्षिणे पादे तदा चैषा विशेषतः ।**

**मुखे नाडी वहेत्वित्यं ततस्तु दिनतुर्यकम् ॥ ७४ ॥**

अर्थ—पुरुषके दहने पैरमें और स्त्रीके वामपैरमें यदि नाडी विशेष संचारकरे तथा आदिमें नित्य नाडी चले तो वहरेगी चारदिन जीवे। आदिशब्दसैं इरा जगे तर्जनी ऊंगली जाननी ॥ ७४ ॥

१. तत्स्थाचिह्नस्य सत्वेऽपोति पाठान्तरम् ।

हिमवद्विशदा नाडी ज्वरदाहेन तापिनाम् ।

त्रिदोषस्पर्शभजतां तदा मृत्युर्दिनत्रयात् ॥ ७५ ॥

अर्थ—सन्निपात ज्वर दाहसे संतप्त रोगीकी नाडी यदि शीतल और निर्मल होय तो वह रोगी तीन दिनमें मरे ॥ ७५ ॥

गतिन्तु ब्रमरस्येव वहेदेकदिनेन तु ।

अर्थ—जिस प्राणीकी नाडी ब्रमरके सदृश गमन करे अर्थात् जैसे भौंरा कुछ दूर उड़कर चला जाता है और फिर उसीजगे आय जाता है इसप्रकार नाडी चलनेसे उसकी एकदिनमें मृत्यु होय ॥

कन्देन स्पन्दते नित्यं पुनर्लगति नाङ्गलौ ॥ ७६ ॥

मरणे डमरूकारा भवेदेकदिने न तु ।

अर्थ—मरणमें नाडी डमरूके आकार होती है, वो १ दिनमें मरे ॥ ७६ ॥

दृश्यते चरणे नाडी करे नैवाधि दृश्यते ।

मुखं विकसितं यस्य तं दूरात्परिवर्जयेत् ॥ ७७ ॥

अर्थ—जिसके चरणमें नाडी प्रतीत होय और हाथमें न मालुम हो, तथा जिसका मुख खुलगयाहो उसे वैद्य त्यागदेय ॥ ७७ ॥

वातपित्तकफाश्वापि त्रयो यस्यां समाश्रिताः ।

कृच्छ्रसाध्यामसाध्यां वा प्राहुवैद्यविशारदाः ॥ ७८ ॥

अर्थ—जिसकी नाडीमें वातपित्त और कफ ए तीनोंदोष होय उसरोगीको बुद्धिवान् वैद्य कृच्छ्रसाध्य अथवा असाध्य कहते हैं ॥ ७८ ॥

शीघ्रा नाडी मलोपेता शीलता वाथ दृश्यते ।

द्वितीयदिवसे मृत्युर्नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ७९ ॥

अर्थ—जिस रोगीकी नाडी वहुधा मलदूषित होकर शीघ्र चले, किंवा शीतल प्रतीतहो उस रोगीकी दूसरे दिन मृत्युहोय, इसप्रकार नाडीज्ञान पारंगत वैद्योनि कहा है ॥ ७९ ॥

मुखे नाडी वहेत्तीत्रा कदाचिच्छीतला वहेत् ।

आयाति पिच्छलस्वेदः सप्तरात्रं न जीवति ॥ ८० ॥

अर्थ—वातनाडी तीव्रगति, तथा कभी मंदवहे तथा अंगमेंसे गाढ़ा पसीना निकले तो वह रोगी सातरात्रि नहीं बचे ॥ ८० ॥

देहे शैत्यं मुखे श्वासो नाडी तीव्रा विदाहिनी ।

मासार्धं जीवितं तस्य नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ८१ ॥

अर्थ—शरीरमें शीतलता, मुखसे अत्यंत श्वास छोड़े, तथा नाडी तीव्रदाहयुक्त चले, उसका अर्धमास आयुष्यहै, ऐसें नाडीज्ञाताओंने कहा है ॥ ८१ ॥

मुखे नाडी यदा नास्ति मध्ये शैत्यं बहिः क्लमः ।

यदा मन्दा वहेनाडी त्रिरात्रं नैव जीवति ॥ ८२ ॥

अर्थ—जिस कालमें वातनाडी चले नहीं अंतर्गत शीतहो तथा बाहर ग्लानीहो-कर मंदमंद नाडी चले तो वह रोगी तीनरात्रि नहीं जीवे ॥ ८२ ॥

अतिसूक्ष्मातिवेगा च शीतला च भवेद्यदि ।

तदा वैद्यो विजानीयात्स रोगी त्वायुपः क्षयी ॥ ८३ ॥

अर्थ—जिसकालमें नाडी अति सूक्ष्म किंवा अतिवेगवान् और शीतल वहे तो रोगी क्षीण आयुहै ऐसें वैद्य जाने ॥ ८३ ॥

विद्युद्वद्वेगिणां नाडी दृश्यते न च दृश्यते ।

अकालविद्युत्पातेव स गच्छेद्यमसादनम् ॥ ८४ ॥

अर्थ—जिस रोगीकी नाडी कभी कभी विजलीके समान फडकजावे और फिर अस्त होजावे, वो रोगी अकस्मात् जैसैं विजली गिरती है, इसप्रकार रोगी यमराजके घर जाय ॥ ८४ ॥

तिर्यगुणा च या नाडी सर्पगा वेगवत्तरा ।

कफपूरितकण्ठस्य जीवितं तस्य दुर्लभम् ॥ ८५ ॥

अर्थ—नाडी उप्पन वक्रगति तथा सर्पके समान बहुत वेगवानहो, तथा कंठ कफसे घिरजावे ऐसा रोगीका जीवन दुर्लभ जानना ॥ ८५ ॥

चला चलितवेगा च नासिका धारसंयुता ।

शीतला दृश्यते या च याममध्येच मृत्युदा ॥ ८६ ॥

अर्थ—जिसकी नाडी कांपनेवाली तथा चंचल नासिकाके श्वासोऽस्त्रासके आ-धारसे चलनेवाली और शीतल ऐसी प्रतीतहो वो रोगी एकप्रहरमें मरे ऐसा जानना ॥ ८६ ॥

शीत्रा नाडी मलोपेता मध्याह्नेश्विसमो ज्वरः ।

दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीयेऽहि प्रियेत सः ॥ ८७ ॥

अर्थ—जिस रोगीकी ब्रिदोषयुक्त नाडी बहुतजल्दी चले, तथा जिसको मध्याह्नमें अग्रिके समान ज्वर आवे, उस रोगीकी आशु एकदिनकी है दूसरे दिन मृत्यु होय ॥  
स्कन्देन स्पन्दते नित्यं पुनर्लग्नि नाङ्गुलौ ।

मध्ये द्वादशयामानां भृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ ८८ ॥

अर्थ—जो नाडी अपने मूलस्थानमें फड़के नहीं और ऊंठीयोंका स्पर्श न करे उसकी बारह प्रहरमें मृत्युहोय, ऐसा जानना ॥ ८८ ॥

स्थित्वा नाडी मुखे यस्य विद्युद्ध्योतिरिवेक्षते ।

दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीये प्रियते ध्रुवम् ॥ ८९ ॥

अर्थ—जिस रोगीकी नाडी मूलस्थानके अग्रभागमें ठहरकर विजलीके सदृश तडफजावे वह एकदिन जीवे, दूसरे दिन निश्चय मरे ॥ ८९ ॥

स्वस्थानविच्युता नाडी यदा वहति वा न वा ।

ज्वाला च हृदये तीव्रा तदा ज्वालावधि स्थितिः ॥ ९० ॥

अर्थ—जिस रोगीकी नाडी अपने स्थानसे विच्युतहो (छट) कर कभी चले कभी नहीं और हृदयमें तीव्र दाहहोय तो जबतक हृदयमें ज्वालाहै तावत्काल रोगीका जीवन है ॥ ९० ॥

अङ्गुष्ठमूलतो वाह्ये व्यङ्गुले यदि नाडिका ।

प्रहरार्द्धाद्विर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९१ ॥

अर्थ—अंगुष्ठमूल अर्थात् तर्जनी ऊंगली धरनेके स्थलमें यदि नाडीकी गति प्रतीत नहो, केवल मध्यमा और अनामिका इन दो अंगुलीसें प्रतीतहोय तो उस रोगीकी अर्ध प्रहरके उपरांत मृत्यु होय ॥ ९१ ॥

सार्द्धद्वयाङ्गुलाद्वाह्ये यदि तिष्ठति नाडिका ।

प्रहरैकाद्विर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९२ ॥

अर्थ—नाडी मूलस्थानसे २॥ अंगुल अंतर अर्थात् यदि केवल अनामिकाके शेषार्द्ध मात्रमें फड़के उसकी प्रहरउपरांत अर्थात् दूसरे प्रहरमें मृत्युहोय ॥ ९२ ॥

पादाङ्गुलगता नाडी चञ्चला यदि गच्छति ।

त्रिभिस्तु दिवसैस्तस्य मृत्युरेव न संशयः ॥ ९३ ॥

अर्थ—यदि नाडी तर्जनीको सर्वांश और मध्यमा ऊंगलीके चतुर्थीशमें व्याप्त हो प्रतीत होवे और मध्यमाके अवशिष्ट पाँदेत्रय और अनामिकाके सर्वांशमें न प्रतीत होय तो उस रोगीकी तीनदिनमें मृत्यु होय ॥ ९३ ॥

**पादाङ्गुलगता नाडी कोषणा वेगवती भवेत् ।  
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९४ ॥**

अर्थ—नाडी पूर्ववत् तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थीशमें व्यापक हो जल्दी जल्दी चले और किंचिन्मात्र गरम प्रतीत होय तो उसरोगीकी चारदिनमें निश्चय मृत्यु होय ॥ ९४ ॥

**पादाङ्गुलगता नाडी मन्दमन्दा यदा भवेत् ।  
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९५ ॥**

अर्थ—नाडी पूर्ववत् समय तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थीशमें व्याप्त हो मन्दमन्द चले तो उसरोगीकी पांचवे दिन मृत्यु होय ॥ ९५ ॥

नाडीद्वारा आयुका ज्ञान ।

**वामनाडी दीर्घरेखा वाहुमूले च स्पन्दते ।  
जीवेत्पञ्चशतं वर्षं नात्र कार्या विचारणा ॥ ९६ ॥**

अर्थ—जिस रोगी वामनाडी दीर्घरेखाके आकारसें भुजाकी जडमें तडफे वो १०५ वर्षजीवे इसमें संदेह नहीं ॥ ९६ ॥

**दीर्घांकारा वामनाडी कर्णमूले च स्पन्दते ।  
जीवेत्पञ्चशतं साढ़े धनिको धार्मिको भवेत् ॥ ९७ ॥**

अर्थ—जिसकी वामनाडी आकारमें लंबी होकर कानकी जडमें प्रतीत होय वह सार्धपंचशतवर्ष जीवे और धनिक तथा धार्मिक होय ॥ ९७ ॥

**वामनाडी स्वल्परेखा हनुमूले च स्पन्दते ।  
पञ्चवर्षाधिकञ्चैव जीवनं नात्रसंशयः ॥ ९८ ॥**

अर्थ—जिसकी वामनाडी स्वल्परेखामें हो छोडीकी जडमें तडफे वो पांचवर्ष अधिक जीवे इसमें संदेह नहीं ॥ ९८ ॥

नाडीद्वारा भाजनका ज्ञान ।

**पुष्टिस्तैलगुडाहारे मांसे च लगुडाकृतिः । क्षीरे च स्तिमिता  
वेगा मधुरे भेकवद्वतिः ॥ ९९ ॥ रम्भागुडवदाहारे रुक्षशु-**

ष्कादिभोजने । वातपित्तार्तिरुपेण नाडी वहति निष्क्रमम् ॥ १०० ॥

अर्थ—तैल और गुडके खानेसे नाडी पुष्ट प्रतीत होती है, मांसके खानेसे नाडी लकड़ीके आकार चलती है, द्रूधपीनेसे मंदगतिसे चलती है। मधुर आहारसे नाडी में डक्कके समान चलती है केला, गुड, बडा रुक्खवस्तु, और शुष्कद्रव्यादि भोजनसे जैसी वातपित्तरोगमें नाडी चलती है उसप्रमाण चले है ॥ १०१ ॥ १०० ॥

अथ रसज्ञानम् ।

मधुरे वर्हिंगमना तिक्ते स्याद्दूलत्तागतिः । अम्ले कोणा  
त्पुवगतिः कट्टुके भृङ्गसन्निभा ॥ १०१ ॥ कषाये कठिना  
म्लाना लवणे सरला द्रुता । एवं द्वित्रिचतुर्योगे नानाध-  
र्मवती धरा ॥ १०२ ॥

अर्थ—मिष्ट पदार्थ भक्षणसे नाडी मोरकीसी चाल चलती है कहुई द्रव्य भक्षणसे स्थूलगति, खड़े पदार्थ खानेसे कुछ उष्ण और मेंडकाकीगति होती है, चरपरी द्रव्य खानेसे भौंराके आकार गति होती है, कसेली द्रव्य खानेसे नाडी कठोर और म्लान होती है, निमकीन पदार्थ खानेसे सरल (सीधी) और जलदी चलनेवाली होती है इसीप्रकार भिन्न भिन्न रसके एकही समय सेवन करनेसे नाडी अनेकप्रकारकी गति वाली होती है ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

अम्लैश्च मधुराम्लैश्च नाडी शीता विशेषतः । चिपिटैर्भ-  
ष्टद्रव्यैश्च स्थिरा मन्दतरा भवेत् ॥ १०३ ॥ कूष्माण्डमूल-  
कैश्चैव मन्दमन्दा च नाडिका । शाकैश्च कदलैश्चैव रक्तपू-  
णैव नाडीका ॥ १०४ ॥

अर्थ—खड़े पदार्थ अथवा मधुराम्ल (मिष्ट और खट्टामिला) भोजनसे नाडी शीतल होती है चिरबा और भुनीहुई (चना, बोहरी) द्रव्य भक्षणसे नाडी स्थिर और मंदगति चलती है पेटा मूली अथवा कंदपदार्थके भक्षणसे नाडी मंद मंद चलती है शाक (पत्रपुष्पादिका) और केलेकी फली भक्षण करनेसे नाडी रक्तपूर्णके सहज चले है ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

१ तिक्ते स्यात्स्थूलता गतेः । २ कषाये कठिनाम्लावा इति वा पाठः ।

मांसात्स्थरवहा नाडी दुग्धे शीता वलीयसी । गुड़ः क्षीरश्च  
पिष्टश्च स्थिरा मन्दवहा भवेत् ॥ १०५ ॥ द्रवेऽतिकठिना  
नाडी कोमला कठिनापि च । द्रवद्रव्यस्य काठिन्ये को-  
मला कठिनापि च ॥ १०६ ॥

अर्थ—मांस भक्षणसें नाडी मंदगामिनि होती है, दूधके पीनेसें नाडी शीतल  
और वढ़वती होती है, तथा गुड़, दूध, और पिष्टपदार्थ (चूनके, पिट्ठी आदिके  
पदार्थ) भक्षणसें नाडी चंचलतारहित मंदगामिनी होतीहै, द्रवपदार्थ (कटी,  
पने, श्रीखंडआदि) भोजनसें नाडी कठिन होतीहै और कठोर (लड्हुके सुहार  
आदिसें नाडी कोमल होती हैं यदि द्रवपदार्थ कुछ कठोर होयतो नाडी कोमल  
और कठोर उभय स्वभाववती होती है ॥ १०५ ॥ १०६ ॥

उपवासाद्वेतक्षीणा तथा च द्रुतवाहिनी ।

संभोगान्नाडिका क्षीणा ज्ञेया द्रुतगतिस्तथा ॥ १०७ ॥

अर्थ—उपवास (निराहार) सें नाडी क्षीण और शीघ्रवाहिनी होती है एवं स्त्री  
संभोगसें नाडी क्षीण और शीघ्र चलनेवाली होतीहै ॥ १०७ ॥

कुपथ्यवसनाडीकीचाल ।

उष्णात्वं विपमावेगा ज्वरिणां दधि भोजनात् ॥ १०८ ॥

अर्थ—यदि ज्वरवान् पुरुष दधि साय तो उसकी नाडी गरम और विषमवे-  
गती होती है ॥ १०८ ॥

इति श्रीमायुरकृष्णलालाङ्गजदत्तगमेणसङ्कलिते नाडीदर्पणे द्वितीयावचोकः

अब इसके उपरान्त कितनेक रोगोंकी नाडीकी जैसी अवस्था होतीहै, उसको  
लिखतेहैं, तहाँ रोगनिरूपणमें प्रधानता करके प्रथम ज्वरनिरूपण करते हैं ।

ज्वरके पूर्वरूपमें ।

अङ्गग्रहेण नाडीनां जायन्ते मन्थराः पुवाः ।

पुवः प्रवलतां याति ज्वरदाहाभिभूतये ॥ १ ॥

सात्रिपातिकरूपेण भवन्ति सर्ववेदनाः ।

अर्थ—ज्वर आनेवाली अवस्थाके कितनेक क्षण पहिले अंगमें पीड़ा होने लगे,  
नाडी मंथर (मंद) भावसें मेंडकाकी चाल चलने लगे तथा दाह ज्वरकी पूर्वाव-

स्थाके वा धारामें वहनेवाले मैंडकाके समान तथा सांनिपातिक ज्वरकी पूर्व अवस्थाके प्रमाण नाना आकृतिसें गमन करे ॥ ३ ॥  
ज्वरके रूपमें ।

**ज्वरकोपेन धमनी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥ २ ॥**

अर्थ—जिस कालमें इसप्राणीको ज्वर चढ़ाताहै उस समय नाडी गरम और वेगवती होती है ॥ २ ॥

**ऊष्मा पित्ताद्वते नास्ति ज्वरो नास्त्यूष्मणा विना ।**

**उष्णा वेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते ॥ ३ ॥**

अर्थ—विना पित्तके गरमी नहीं और विना गरमीके ज्वर नहीं होता अतएव ज्वरके वेगमें नाडी गरम और वेगवान् होती है ॥ ३ ॥

**ज्वरे च वक्रा धावन्ती तथा च मारुतपृष्ठे ।**

**रमणान्ते निशि प्रातस्तथा दीपशिखा यथा ॥ ४ ॥**

अर्थ—ज्वरके कोपमें और वादीमें नाडी टेढ़ी और दोडती चलती है तथा मैथुनकरनेके पिछाड़ी रात्रिमें और प्रातःकालमें नाडी दीपशिखाके समान मैंदगमन करती है ॥ ४ ॥

वातज्वरे ।

**सौम्या सूक्ष्मा स्थिरा मन्दा नाडी सहजवातजा ।**

**स्थूला च कठिना शीघ्रा रूपन्दते तीव्रमारुते ॥ ५ ॥**

**वक्रा च चपला शीतस्पर्शा वातज्वरे भवेत् ।**

अर्थ—स्वाभाविक वायुके द्वारा नाडी कोमल, सूक्ष्म, स्थिर, और मंद वेगवाली होती है । तीव्रवायुद्वारा नाडी स्थूल, कठिन, तथा जलदी चलनेवाली होती है । और वातज्वरमें टेढ़ी, चपल, तथा शीतल स्पर्शवान् नाडी होती है ॥ ५ ॥

**द्रुता च सरला दीर्घा शीघ्रा पित्तज्वरे भवेत् ।**

**शीघ्रमाहननं नाड्याः काठिन्याच्चलते तथा ॥ ६ ॥**

अर्थ—पित्तज्वरमें नाडी शीघ्र चलनेवाली, सरल, दीर्घ, और कठिनताके साथ शीघ्र फड़कनेवाली होती है ॥ ६ ॥

**नाडी तन्तुसमा मन्दा शीतला श्लेष्मदोषजा ।**

१ मंदाच सुस्थिरा शीता पित्तला श्लेष्मिनोभवेत् इति पाठांतरम् ।

मलाजीर्णं नातितरां स्पन्दनं च प्रकीर्तिम् ॥ ७ ॥

अर्थ—कफके प्रकोपमें नाड़ी तंतुवत् सूक्ष्म, मंदवेगवाली, और शीतल होती है। और मलाजीर्णमें अत्यंत नहीं फड़कती ॥ ७ ॥

द्रुंगजनाडी

चञ्चला तरला स्थूला कठिना वातपित्तजा । ईषच्च  
दृश्यते तूष्णा मन्दा स्याच्छेष्मवातजा ॥ ८ ॥ निर-  
न्तरं खरं रुक्षं मन्दश्वेष्मातिवातलम् । रुक्षवाते भवे-  
तस्य नाडी स्यात्पित्तसन्निभा ॥ ९ ॥ सूक्ष्मा शीता  
स्थिरा नाडी पित्तश्वेष्मसमुद्धवा ॥ १० ॥

अर्थ—वातपित्तकी नाडी चंचल, तरल, स्थूल, और कठोर होती है। वातकफकी नाडी कुछ गरम और मंदगामिनी होती है। जिस नाडीमें किंचिन्मात्र कफ और अधिक वात होती है। वह अत्यंत खर और रुक्ष होती है। जिसके नाडीमें वायुका अत्यंत कोप होय उसकी पित्तके सदृश अर्थात् अत्यंत वक्र और अत्यंत स्थूल होय, पित्तकफन्वरमें नाडी सूक्ष्म शीतल, और मन्दवेगवाली होती है ॥ १० ॥

सूधिरकोपजानडी ।

मध्ये करे वहेन्नाडी यदि सन्तापिता ध्रुवम् ।

तदा तूनं मनुष्यस्य रुधिरापूरितामलाः ॥ ११ ॥

अर्थ—मध्य करमें अर्थात् मध्यमांगुली निवेशस्थलमें नाडी संतापित होकर तड़फे तो जानेकि वातादि दोषब्रय रक्तप्रकोपकरके परिपूर्ण है। अर्थात् रुधिरसें दूषितहै ॥ ११ ॥

आगन्तुकरुपभेदमाह ।

भूतज्वरे सेक इवातिवेगात् धावन्ति नाड्यो हि यथाबिधगामाः ।

अर्थ—भूतज्वरमें नाडी अत्यंत वेगसें चलती है जैसें समुद्रमें जानेवाली नदियोंका प्रवाह वेगसें चलता है ॥ १२ ॥

तथा ।

एकाहिकेन क्वचन प्रदूरे क्षणान्तगामा विषमज्वरेण ॥

१ वक्रा च ईषच्चपला कठिना वातपित्तजा इति पाठान्तरम् ।

**द्वितीयके वाथ तृतीयतुर्ये गच्छन्ति तता ऋमिवत् क्रमेण ॥१३॥**

अर्थ—एकाहिकज्वरमें नाडी सरलमार्गको त्यागकर क्षणक्षणमें पार्श्वगामिनी होती है तथा द्वितीय, तृतीय ( तिजारी ) और चातुर्थनामक विषमज्वरमें उपर्युक्त होकर इतस्तो धावमाना होती है ॥ १३ ॥

अन्यत्रापि ।

**उष्णवेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते । उद्गेगक्रोधकामेषु भयचिन्ताश्रमेषु च । भवेत् क्षीणगतिर्नाडी ज्ञातव्या वैद्यसत्तमैः ॥१४॥**

अर्थ—गरम और वेगवान् नाडी ज्वरके कोपमें होती है उद्गेग, क्रोध, कामबाधा भय, चिन्ता, और श्रम इनमें नाडी क्षीणगतिवाली होती है अर्थात् मंद मंद गमन करती है ॥ १४ ॥

प्रसङ्गादाह ।

**व्यायामे श्रमणे चैव चिन्तायां श्रमशोकतः ।**

**नाना प्रभावमना शिरा गच्छति विज्वरे ॥ १५ ॥**

अर्थ—व्यायाम ( देढ़कसरत ) करनेसें, डोलनेसें, चिंता, श्रम, और शोकसें, एवं ज्वरराहित मनुष्यकी नाडी अनेकप्रभावसें गमन करती है ॥ १५ ॥

अजीर्णरूपमाह ।

**अजीर्णे तु भवेन्नाडी कठिना परितो जडा ।**

**प्रसन्ना च द्रुता शुद्धा त्वरिता च प्रवर्तते ॥ १६ ॥**

अर्थ—आमाजीर्ण और पक्काजीर्ण दोनोंमें नाडी कठोर और दोनोपार्श्वोंमें जड होती है इसीप्रकार कभी निर्मल निर्दोष तथा शीघ्रवेगवाली होती है ॥ १६ ॥

तत्र विशेषमाह ।

**पक्काजीर्णे पुष्टिहीना मन्दं मन्दं वहेजडा ।**

**असूक्पूर्णा भवेत् कोष्णा गुर्वी सामा गरीयसी ॥ १७ ॥**

अर्थ—पक्काजीर्णमें नाडी पुष्टारहित मंद मंद चलती है । तथा भारी होती है एवं रुधिरकरके परिपूर्णनाडी गरम, भारी होती है और आमवातकी नाडी भारी होती है ॥ १७ ॥

**लघ्वी भवति दीप्तप्रेरस्तथा वेगवती मता ।**

**मन्दाम्बेः क्षीणधातोश्च नाडी मन्दतरा भवेत् ।**

**मन्देऽग्नौ क्षीणतां याति नाडी हंसाकृतिस्तथा ॥ १८ ॥**

अर्थ—दीप्ताग्निवाले मनुष्यकी नाडी हलकी और वेगवती होती हैं, मंदाग्निवालेकी और क्षीणधातुकपुरुषकी नाडी मंदतर होती है, इसीप्रकार जिस मनुष्यकी जठराग्नि सर्वथा मंदहोई हो उसकी नाडी हंसके समान अतिशय मंदहोती है ॥ १८ ॥

**आमात्रमे पुष्टिविवर्धनेन भवन्ति नाड्यो भुजगाग्रमानाः ।**

**आहरमान्द्यादुपवासतो वा तथैव नाड्योऽयभुजाभिवृत्ताः ॥ १९ ॥**

अर्थ—आम, और परिश्रम न करनेसे तथा देहमें अत्यंत पुष्टता होनेसे नाडी सर्पके अयभागके सदृश होती है इसीप्रकार थोड़ा भोजन करनेसे या उपवास करनेसे नाडी भुजाके अयभागमें सर्पके अयभाग समान होती है ॥ १९ ॥

ग्रहणीरीगे ।

**पादे च हंसगमना करे मण्डूकसंपूवा ।**

**तस्याग्रेर्मन्दता देहे त्वथवा ग्रहणीगदे ॥ २० ॥**

अर्थ—जिसकी पैरकी नाडी हंसके समान और हाथकी नाडी मैड़काके समान चले उसके देहमें मंदाग्नि है अथवा संग्रहणी रोग है ऐसा जानना ॥ २० ॥

**भेदेन शान्ता ग्रहणीगदेन निर्वीर्यरूपा त्वतिसारभेदे ।**

**विलम्बिकायां प्रुवगा कदाचिदामातिसारे पृथुता जडा च २१ ।**

अर्थ—संग्रहणीका दस्तहोनेके उपरांत नाडी शांतवेगा होती है अतिसाररोगका दस्तहोनेके उपरांत नाडी सर्वथा बलहीन होजाती है विलम्बिकारोगमें नाडी मैड़काके तुल्य चलती है इसीप्रकार आमातिसारमें नाडी स्थूल और जड़वत होती है ।

विप्रचिकाज्ञानम् ।

**निरोधे मूत्रशकृतोर्विड्यग्ने त्वितराथ्रिताः ।**

**विप्रचिकाभिभृते च भवन्ति भेकवत्क्रमाः ॥ २२ ॥**

अर्थ—केवल मल वा केवल मूत्र अथवा मलमूत्र दोनो ऐसाथ बंद होजावे वा इच्छापूर्वक इनके वेगकी रोकनेसे एवं विप्रचिका रोगमें नाडीकी गति मैड़काकी चालके समान होती है ॥ २२ ॥

अनाहमूत्रकुच्छे ।

**अनाहे मूत्रकुच्छे च भवेन्नाडीगरिष्ठता ।**

अर्थ—अनाह अफरा और मूत्रकृच्छ्र रोगमें नाडी गुरुतर अर्थात् भारी होती है ॥

शूलरोगे ।

वातेन शूलेन मरुत्पुवेन सदैव वक्रा हि शिरा वहन्ती ।

ज्वालामयी पित्तविचेष्टितेन साध्या न शूलेन च पुष्टिरूपा ॥२३॥

अर्थ—वायुशूलमें और वायुके प्रखरता निवंधनमें नाडी सदैव अत्यंत टेढ़ी चलती है पित्तके शूलमें यह अतिशय गरम होती है। और आमशूलमें पुष्टियुक्त होती है ॥ २३ ॥

प्रमंहज्ञान ।

प्रमेहे ग्रन्थिरूपा सा सुतसा त्वामदूषणे ।

अर्थ—प्रमेह रोगमें नाडी ग्रन्थि अर्थात् गांठके आकार प्रतीत होयहै और आमवात रोगमें नाडी सर्वकालमें उष्ण होती है ॥

विषविष्टभगुलमज्ञानम् ।

उत्पित्सुरूपा विषरिष्टकायां विष्टभगुलमेन च वक्ररूपा ।

अत्यर्थवातेन अधः स्फुरन्ती उत्तानभेदिन्यसमाप्तकाले ॥ २४ ॥

अर्थ—विषभक्षण वा सर्पादि दंशजन्य अरिष्टलक्षण प्रकाशित होनेसे तत्कालमें नाडी देखनेसे बोधहोयहैं। कि इसके यह रोगकी नवीन उत्पन्न होताहै। और विष्टभ तथा गुर्व रोगमें विषके तुल्य और विशेषता यह होतीहै कि उसनाडीकी गति वक्ररूप होतीहै। इन दोनों पीडामें अत्यंत वायुका प्रकोप होनेसे नाडी अधस्फुरित होय एवं इनकी असंपूर्णवस्थामें अर्थात् पूर्वरूपावस्थामें नाडी अत्यंत ऊर्ध्व गतिहोय ॥ २४ ॥

गुल्मे विशेषमाह ।

गुल्मेन कम्पाथं पराक्रमेण पारावतस्येव गर्ति करोति ॥ २५ ॥

अर्थ—गुल्मरोगमें नाडी कंपितहो बलपूर्वक खबुतरकी तुल्य गमन करतीहै।

अथ भगन्दरज्ञानम् ।

ब्रणार्थं कठिने देहे प्रयाति पैत्तिकं ऋमम् । भगन्दरानुरूपेण

नाडी ब्रणनिवेदने ॥ २६ ॥ प्रयाति वातिकं रूपं नाडीपावकरूपिणी

अर्थ—ब्रणरोगकी अपक्रबवस्थामें नाडीकी गति पैत्तिक नाडीके तुल्य होतीहै।

भगंदर तथा नाडीत्रिंश रोगमें नाडीकी गति वातनाडीके तुल्य और अत्यंत उच्च होती है ॥ २७ ॥

वान्तादिज्ञानम् ।

वान्तस्य शल्याभिहतस्य जन्तोर्वेगावरोधाकुलितस्य भूयः ।  
गतिं विधत्ते धमनी गजेन्द्रमरालमानेव कफोल्बणेन ॥ स्त्री-  
रोगादिकमपि रक्तादिज्ञानकमेण ज्ञातव्यम् ॥ २८ ॥

अर्थ—वमित ( जिसने रह करीहो ) शल्याभिहत ( जिसके किसी प्रकारका वाण आदि शल्य लगाहो ) और वेगोधी ( जिसने मल मूत्रको धारण कर रखाहो ) ऐसे प्राणियोंकी नाडी तथा कफोल्बणा नाडी हाथी और हंसादिक-की गतिके समान चलतीहै । इसीप्रकार रक्तादि ज्ञानकरके अनुकूल जो स्त्रीके रोग प्रदरादिक उनकोभी वैद्य अपनी बुद्धि मानीसें जानलेवे यह नाडीपरीक्षा शंकर-सेनके मतानुसार लिखिहै ॥ २८ ॥

नाडीस्पन्दनसंख्या ।

षष्ठ्यास्पन्दास्तु मात्राभिः षट्पञ्चाशास्त्रवन्ति हि । शिशोः  
सद्यः प्रसूतस्य पञ्चाशत्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥ चत्वारिंशत्ततः  
स्पन्दाः षट्पञ्चाशाद्यौवने ततः । प्रौढस्यैकोनत्रिंशत्स्युर्वार्धकेऽ  
ष्टौ च विशितिः ॥ ३० ॥

अर्थ—अब नाडीके फड़कनेकी संख्या कहते हैं, जैसैं कि ६० दीर्घ अक्षर उ-झारण करनेमें जितना काल लगताहै उतने समयमें अर्थात् १ पलमें तत्काल हुए बालकी नाडीकी स्पन्दनसंख्या ९६ वार होती है । इसके उपरान्त अवस्था बढ़नेके अनुसार ५० तथा ४० वार होती है । योवन अवस्था अर्थात् जवानीमें ३६ धार होती है । और प्रौढ़ अवस्थामें २९ वार, और बुढ़ापेमें २८ वार, एकपलमें नाडी फड़कती है ॥ २९ ॥ ३० ॥

पुंसोऽतिस्थविरस्य स्युरेकंत्रिंशदतः परम् । योषितां पुरुषा-  
णां च स्पन्दास्तुल्याः प्रकीर्तिताः ॥ ३१ ॥ प्रौढानां रम-  
णीनां तु द्वयाधिकाः सम्मता वुधैः ॥ ३२ ॥

अर्थ—अति वृद्धहोनेसें नाडीकी संख्या फिर बढ़नें लगती है अर्थात् एकपलमें ३१ वार तड़फती है यह अवस्थाभेदकरके संपूर्ण स्पन्दन संख्या लिखि गईहै ।

यह संख्या स्त्री और पुरुष दोनोंमें समान कही है । परंतु केवल प्रौढावस्थामें स्त्री-की नाडी संख्या पुरुष संख्याकी अपेक्षा अधिक अधिक अर्धात् प्रौढ़ पुरुषकी स्पन्दनसंख्या प्रतिपलमें २९ बार होती है । और प्रौढा स्त्रीकी संख्या ३२ बार होती है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

**दृशगुरुक्षरोच्चारकालः प्राणः पडात्मकैः ।**

**तैः पलं स्यात्तु तत् पष्ट्या दण्ड इत्यभिधीयते ॥ ३३ ॥**

अर्थ—एक दीर्घवर्णउच्चारण करनेमें जितना समय लगता है उसको एक मात्रा अथवा निमेष कहते हैं । १० मात्राका १ प्राण ६ प्राणका १ पल ६० पलका १ दंड होता है । अतएव एक पलका साठ भाग उसमें एक भागको विपल कहते हैं उसीको मात्रा कहते हैं ॥ ३३ ॥

मतान्तरेण ।

**स्वस्थानां देहिनां देहे वयोवस्थाविशेषतः ।**

**प्रवहन्ति यथा नाडयस्तत्संख्यानमिहोच्यते ॥ ३४ ॥**

अर्थ—अब मतान्तरसे कहते हैं कि स्वस्थपुरुषोंके देहमें आयुकी अवस्था विशेषकरके जैसे नाडी चलती है उनकी संख्या इसग्रंथमें लिखते हैं ॥ ३४ ॥

**सार्धद्वयपलः कालो यावद्गुच्छति जन्मतः ।**

**तावत्प्रकम्पते नाडी चत्वारिंशच्छताधिकम् ॥ ३५ ॥**

अर्थ—बालकके जन्मलेनसे यावत् २॥ पल व्यतीत नहीं हो उतने समयमें १४० बार नाडी बारंबार कंपन होती है ॥ ३५ ॥

**तद्वृद्ध्वं हायनं यावत्सार्धद्वयपलेन सा ।**

**मुहुः प्रकम्पमाधत्ते त्रिंशद्वारं शतोत्तरम् ॥ ३६ ॥**

अर्थ—फिर १ वर्षकी अवस्थापर्यंत बालककी नाडी २॥ पलमें १३० बार तड़फती है ॥ ३६ ॥

**उपरिष्टादाद्वितीयात्तावत्काले शरीरिणः ।**

**ततः प्रकम्पते नाडी दशाधिकशतं मुहुः ॥ ३७ ॥**

अर्थ—वर्ष दिनसे लेकर जबतक यह बालक दो वर्षका होता है तावत्कालपर्यंत नाडी ढाई पलमें ११० बार बारंबार तड़फती है ॥ ३७ ॥

**ततस्त्रिवत्सरं व्याप्य देहिनां धमनी प्रनः ।**

मुहुः प्रकम्पते तद्वत्सार्घद्वयपले शतम् ॥ ३८ ॥

अर्थ-फिर दो वर्षसे उपरांत तीन वर्षतकके बालककी नाडी २॥ पलमें १०० बार बारंबार तड़फती है ॥ ३८ ॥

ततस्त्वासतमाद्वर्षान्नवतिः स्यात्प्रवेपनम् ।

धमन्यास्तन्मिते काले प्रत्यक्षाद्गुभूयते ॥ ३९ ॥

अर्थ-फिर तीन वर्षसे सात वर्षतकके बालककी नाडी २॥ पलमें १० बार बारंबार चलती है ॥ ३९ ॥

ततश्वतुर्दशं तावत्पञ्चाशीतिः प्रवेपनम् । त्रिंशद्वर्षमभिव्याप्य ततोऽशीतिः प्रकीर्तितम् । शतार्घवत्सरं व्याप्य कम्पनं पञ्चसततिः । ततोऽशीतौ प्रकथितं पष्टिदारं प्रवेपनम् ॥ ४० ॥

अर्थ-फिर सात वर्षसे लेकर चौदह वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीकी नाडी २॥ पलमें ८५ बार तड़फती है । और चौदह वर्षकी अवस्थासे लेकर ३० वर्षकी अवस्थापर्यंत ढाई पलमें ८० बार तड़फती है । तीस वर्षके उपरांत पंचास वर्ष पर्यंत ७५ बार कंपन होती है । और पंचास वर्षसे लेकर अस्सी वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीको नाडी २॥ पलमें ६० बार कंप होती है ॥ ४० ॥

वयोऽवस्थाक्लेणैवं क्षीयन्ते गतयो मुहुः ।

सार्घद्वयपले काले नाडीनामुत्तरोत्तरम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-फिर जैसे जैसे अवस्था क्षीण होती जाती है उसी प्रकार नाडीका गमनभी २॥ पलमें क्षीण होता जाता है ॥ ४१ ॥

एवं वहुविधाद्वोगात्तत्त्विङ्गात्तुवोधनी ।

नाडीनां च गतिस्तद्वद्वेत्कालात्पृथक् पृथक् ॥ ४२ ॥

अर्थ-इसप्रकार अनेकविध रोगोंसे उन्हीं लिङ्गोंकी वोधन करनेवाली नाडियोंकी गति पृथक् पृथक् कालमें पृथक् पृथक् होती है ॥ ४२ ॥

हृदयस्य वृहद्वागः संकोचं प्राप्यते यदि ।

प्रसारयेत्तदा नाडी वायुना रक्तवाहिनी ॥ ४३ ॥

अर्थ-जिस समय हृदयका वृहद्वाग संकुचित होता है और खुलता है उससमय रक्तवाहिनी नाडियोंकी गति पवनके वेगसे प्रस्पन्दन होती है ॥ ४३ ॥

**नाडीगतिरतिक्षीणा भवेन्मलविभेदतः ।**

**जीर्णज्वरादुल्परत्ता दुर्वलत्वाच्च ताहशी ॥ ४४ ॥**

अर्थ—मलके निकलनेसे नाडीकी गति अत्यंत क्षीण होती है । उसीप्रकार जीर्णज्वरसे अल्परुधिरसे और दुर्वलतासे भी नाडी अतिक्षीण होती है ॥ ४४ ॥

**तर्पयन्त्यसुजं देहे व्याधोत्तर्गतिभेदतः ।**

**तेजःपुञ्जा चञ्चला च दुर्वला क्षीणधीरकैः ॥ ४५ ॥**

अर्थ—ये संपूर्ण रक्तवाहिनी नाडी आवातकरके और अपनी गतिके भेदसे देहमें रुधिरकी तर्पण करेहै अर्थात् सर्वत्र फैलाती है । उनकी गति भेद कहतेहै । जैसे तेजःपुञ्जा, चञ्चला, दुर्वला, क्षीणदा, और धीरगामिनी, ये नाडियोंकी पांच प्रकारकी गती है ॥ ४५ ॥

चञ्चला और तेजःपुञ्जगति ।

**रक्तोष्णो शीघ्रगा नाडी ज्वरे च चञ्चला भवेत् ।**

**ज्वरारम्भे तथा वाते तेजःपुञ्जा गतिः शिरा ॥ ४६ ॥**

अर्थ—तहाँ रुधिरके कोपमें गरमीमें नाडी शीघ्र चलती है, उसीप्रकार ज्वरमें चञ्चला नाडी होती है और ज्वरके आरंभमें तथा वातके रोगमें नाडीकी तेजःपुञ्जा गति होती है ॥ ४६ ॥

दुर्वला और क्षीणनाडी ।

**दुर्वले ज्वररोगे च अतिसारे ग्रवाहिके ।**

**दुर्वला क्षीणदा नाडी प्रबला प्राणघातिका ॥ ४७ ॥**

अर्थ—दुर्वलतामें ज्वरमें अतिसार और ग्रवाहिकारोगमें नाडीकी दुर्वला गति होती है, क्षीणदा नाडीप्रबल प्राणोंकी नाशक होती है ॥ ४७ ॥

**वहुकालगता रोगः सा नाडी धीरगामिनी ।**

अर्थ—जिसप्राणीके बहुतदिनोंसे रोगहोवे उसकी नाडी धीरगामिनी होती है ।

सुखीपुरुषकीनाडी ।

**हंसगा चैव या नाडी तथैव गजगामिनी ।**

**सुखं प्रशस्तं च भवेत्स्यारोग्यं भवेत्सदा ॥ ४८ ॥**

अर्थ—जिसप्राणीकी नाडी हंसकीसी अथवा हाथीकीसी चाल चले उसको उत्तम सुखहोय और सदैव आरोग्यरहे ॥ ४८ ॥

सुव्यक्तता निर्मलत्वं स्वस्थानस्थितिरेव च ।  
अमन्दत्वमचाच्चल्यं सर्वासां शुभलक्षणम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—उत्तम प्रकारसे प्रतीतहो निर्मल अपने स्थानमें स्थिति, अमंदत्व और चांचल्यता रहितहो येसंपूर्ण नाडियोंके शुभ लक्षण जानने ॥ ४९ ॥

दोषसाम्याच्च साहश्यादनुकासु रुजास्वपि ।  
ज्ञातव्या धमनीधर्मी युक्तिभिश्चानुमानतः ॥ ५० ॥

अर्थ—यह कितनेएक रोगोंमें नाडीकी प्रकृति लिखी है, इससे भिन्न अन्य समस्त रोगोंमें जैसी जैसी नाडियोंकी गति होती है उसको वैद्य अनुमान और युक्तिद्वारा जाने, अर्थात् जिस रोगकी जिस जिस रोगके साथ साहश्यताहै अथवा जिसकिसी रोगमें संपूर्ण कुपितदोषोंके साथ अन्य किसीरोगके कुपित दोषोंकी साम्यता मिले उन उन रोग समस्तोंमें नाडीकी एकविध गति होतीहै ऐसा जानना ॥ ५० ॥

नाडीदर्शनानन्तरहस्तप्रक्षालन ।

नाडीं दृष्टा तु यो वैद्यो हस्तप्रक्षालनं चरेत् ।  
रोगहानिर्भवेच्छीघ्रं गंगास्नानफलं लभेत् ॥ ५१ ॥

अर्थ—जो वैद्य रोगीकी नाडी देखकर हाथको जलसे धोताहै, तो जिसरोगीकी नाडीदेखी उसका रोग शीघ्र नष्टहोय, और वैद्यको गंगास्नानका फल प्राप्तहोय ॥ ५१ ॥

तथाच ।

यो रोगिणः करं स्पृष्टा स्वकरं क्षालयेद्यदि ।  
रोगास्तस्य विनश्यन्ति पङ्कःप्रक्षालनाद्यथा ॥ ५२ ॥

अर्थ—जो वैद्य रोगीकी नाडी देख अपने हाथको धोताहै इसकर्मसे जैसे धोने से कीच जातीहै इसप्रकार उस रोगीका रोग दूर होताहै ॥ ५२ ॥

इति श्रोपाटकज्ञातीयमाधुरक्षणलालसूनुना दत्तरामेण निर्मिते आयुर्वेदोद्धरे वृहन्निघटुरत्नान्तर्गते नाडीदर्पणे आयुर्वेदोक्तनाडीपरोक्षावर्णनामचतुस्त्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३४ ॥

अथ यूनानीमतानुसारनाडीपरीक्षामाह ॥

३५० ३५१

नाडीनामान्तरं नव्जं यूनानी वैद्यके मतः ।

विधास्ये तत्रम् चात्र वैद्यानां कौतुकाय च ॥ १ ॥

अर्थ—यूनानी वैद्यनाडीको नव्ज कहते हैं उस नव्जका क्रम अर्थात् नव्जपरीक्षाकोमें वैद्योंके कौतुकनिमित्त लिखताहू ॥ १ ॥

हयवानीचैव नफसानी रुहद्यमुदाहृदम् ।

हृदयस्थं शिरस्थं च देही देहसुखावहम् ॥ २ ॥

अर्थ—रुह दो प्रकारकी हैं एक हयवानी दूसरी नफसानी हयवानी हृदयमें रहतीहै । और नफसानी मस्तकमें रहतीहै । ए दोनों देहधारियोंकी देहको सुखदायक है ॥ २ ॥

तत्सङ्गतास्तु या नाड्यः शुरियानसवः क्रमात् ।

हृत्पद्मे यास्तु सङ्गमाः समन्तात्प्रस्फुरन्ति ताः ॥ ३ ॥

१ मानसिक शिराके परिवर्तनको नाडी कहते, वह मनके प्रफुल्लित और संकुचित होनेसे चलतीहै । इसका यह कारणहै कि उसके विकसित होनेसे वाहरी पवन भीतर जातीहै, इसीसे हयवानीरुह जो मनमेहै वह प्रसन्न होतीहै । और उष्ण पवनके दूरकरनेको हृत्पद्म संकुचित होताहै, इन दोनों कारणोंसे मनुष्यके संपूर्ण देहकी चेष्टा और उसके रोग तथा स्वस्थताका ज्ञान होताहै इस नाडीके दश भेदोंसे शरीरकी चेष्टा प्रतीत होतीहै ।

प्रथमतो यह कि यह कितनी विकसित और कितनी संकुचित होतीहै, इसके विस्तार ( लंबाव ) आयत ( चोडाव ) और गंभीरादि भेदसे नौ भेद होतेहै, अर्थात् कितनी लंबी, कितनी चौड़ी, और कितनी गंभीर इनतीनोंको अधिक न्यून और समानताके साथ प्रत्येकके गुणन करनेसे नौ भेद होजातहै । जैसे १ दीर्घे २ हृत्पद्म ३ समान ४ स्थल ५ कृश और ६ समानविस्तृत ७ वहिर्गति अत्युच्च ८ अंतर्गति अतिनीच ९ उच्चनीचत्वसमान ।

१ अति लंबनाडीमें अति उष्णताके कारण रोगकी आधिक्यता प्रतीत होतीहै । २ न्यूनलंबनाडीमें गरमीके न्यून होनेसे रोगकी न्यूनता प्रतीत होतीहै, ३ समान लंबनाडीमें प्रकृतिकी उष्णता यथार्थ रहतीहै, ४ अधिक विस्तृतमें शरदी अधिक होतीहै । अतएव यह नाडी अपने अनुमानसे अधिक चौड़ी होतीहै ।

अर्थ—उस रुहके साथ लगीहुई जो नाड़ी है वो दो हैं एक शुरियान् दूसरी असद इनमें शुरियान् नाड़ी हृत्पद्ममें लगरही है उससे सर्वत्र स्फुरण होता है ॥ ३ ॥

**शिरोन्तर्मार्गसम्बद्धास्ताभिश्चेष्टादिकं भवेत् ।**

**श्रेष्ठो जीवनिवासोहृद्राङ्गो राज्यासनं यथा ॥ ४ ॥**

अर्थ—और दूसरी असव नामक जो नाड़ी है, वह शिरोन्तरभाग अर्थात् म-स्तकके भीतर लगरही है, इन नाड़ीयोंकरके इसदेहकी चेष्टादि होती है । जैसैं राजा राजसिंहासनपर स्थित हो शोभित होता है । उसीप्रकार जीवका श्रेष्ठनिवास हृदय स्थान है ॥ ४ ॥

**तद्भवाधमनी मुख्या मनुष्यमणीबन्धगा ।**

**परीक्षणीया भिषजाद्यङ्गुलीभिश्चतसृभिः ॥ ५ ॥**

अर्थ—उन हृदत्तनाड़ीयोंमें मनुष्यके पहुचेकी धमनी नाड़ी मुख्य है । उसको वैद्य चार उंगली रखकर परीक्षा करे । अपने शास्त्रमें तीन उंगलीसें परीक्षा करना सिखाहै परंतु यूनानी वैद्य चार दोषोंको चार उंगलियोंसे देखना कहते हैं ॥ ५ ॥

**यथैणगतिपर्यायस्तद्दुत्पुत्य गच्छति ।**

**गिजाली गतिराख्याता पित्तकोपविकारतः ॥ ६ ॥**

अर्थ—जैसे मृगकाबज्ज्ञा उछलता कूदता चलता है इस प्रकार नाड़ीकी गतिकी गिजाली कहते हैं । यह पित्त कोप विकारको सूचित करती है ॥ ६ ॥

**तरङ्गनाममोजस्यात् मोजीगतिरितीरिता ।**

**निवेदयतिवर्ष्मस्थं वायोरूष्माणमेव सा ॥ ७ ॥**

अर्थ—यूनानी जलकी लहरको मौज कहते हैं उस मौज सदृश नाड़ीकी गतिकी मौजी गति कहते हैं यह देहस्थ पवनकी गरमीको जाहिर करती है ॥ ७ ॥

**दूदस्यात्क्रिमिपर्यायो दूती तस्य गतिः स्मृता ।**

**श्वेष्माणसंचयं चामं प्रकटीकुरुते हि सा ॥ ८ ॥**

अर्थ—दूद ( कानसलाई आदि ) कृमिका पर्याय है अतएव तद्विशिष्टा नाड़ीकी गतिकी दूदी गति कहते हैं । यह कफके संचयकी और आमको प्रकाशित करती है ॥ ८ ॥

**उमल्पिपीलिकामोर उमली तद्रतिः स्मृता ।**

यस्य नाडी तथा गच्छेन्मृतिं तस्याशु निर्दिशेत् ॥ ९ ॥

अर्थ—उमल चैटी ( कीड़ी ) और मोरका नामहै अतएव इन्हों किसी गतिकी उमली गति कहते हैं । जिस पुरुषकी नाडी ऐसी अर्थात् मोर चैटी कीसी चले वो प्राणी जलदी मृत्युको प्राप्तहो ॥ ९ ॥

असिपत्रस्य पर्यायो मिन्शार इति कीर्तिः ।

यथास्यात्तत्क्रमः काष्टे मिन्शारी सा गतिर्भवेत् ॥ १० ॥

तद्रुतिं धमनीधत्ते बाह्यान्तः शोथरोगिणः ।

अर्थ—आरेका पर्याय यूनानीमें मिन्शार है वो जैसे लकड़ीके ऊपर चलता है इसप्रकार नाडीके गमन करनेकी मिन्शारी गति कहतेहै । इसप्रकारकी नाडी बाहरभीतर सोथ रोगीकी चलती है ॥ १० ॥

जन्वलफारनाम्नीया गतिर्मूषकपुच्छवत् ॥ ११ ॥

पित्तश्लेष्मप्रकोपेण धमन्याः सम्भवेत्किल ।

अर्थ—जिस नाडीकी गति मूषक ( चूहे ) की पुच्छसदृशहो अर्थात् एक ओर से मोटी और दूसरी तरफ क्रमसे पतलीहो उसको जन्वलफार गति कहते हैं यह पित्तकफके कोपमें होती है ॥ ११ ॥

माली शलाका सदृशी सूक्ष्मा धीरा बलात्ययात् ॥ १२ ॥

गत्याघातद्वयं यस्यामधस्तादङ्गुलेभवेत् ।

जुलफिकरत्तस्मृता पित्तश्लेष्मदुग्धप्रबोधिनी ॥ १३ ॥

अर्थ—जो नाडी सलाईके आकार अत्यंत सूक्ष्म और धीरगामिनी होय वो माली कहाती है यह बल नाश होनेसे होती है और जो नाडी मध्यमांगुलीमें दोबार आघातकरे वह पित्तकफ दुग्धको बोधन करती है इसको जुलफिकर कहतेदै ॥ १२ ॥ १३ ॥

सुर्तैइदं प्रस्फुरन्तीया गतिः कोष्ठस्य रूक्षताम् ।

विङ्ग्रहत्वं च सौदावी विचारान् ज्ञापयत्यपि ॥ १४ ॥

अर्थ—जिस नाडीके प्रस्फुरणसे कोठेको रूक्षता प्रगटहोवे उसको सुर्तैइदं कहते हैं और इसीसे मलबंधका ज्ञान होताहै यह सौदावी ( वादीकी ) नाडीवे विचारसे जाने ॥ १४ ॥

इर्तिशा कम्पपर्यायस्तद्विशिष्टा तु या भवेत् ।

मुर्त्तिश्नाम सा ज्ञेया सफरासौदाविकारयुक् ॥ १५ ॥

अर्थ—कंपको फारसीमें इर्तिशा कहते हैं उसके समान जो नाड़ी हो उसको मुर्त्तिश्नाम नाड़ी कहते हैं यह सफरा (पित्त) और सौदा दोनोंके मिश्रितावस्थामें होती है ॥ १५ ॥

सुमृतिला पूर्ति तूद्विष्टाऽसृजोस्यां मुमृतिली तु सा ।

तमः कफादधोगाया मुन्खफिज् सा प्रकीर्तिता ॥ १६ ॥

अर्थ—परिपूर्णको फारसीमें मुमृतिला कहते हैं, अतएव जिस नाड़ीसें रुधिरकी परिपूर्णता प्रतीत हो उस नाड़ीकी गतिको मुमृतिली कहते हैं जी नाड़ी तमोगुण या कफसें अधोभागमें गमनकरे उसको मुमृतिली नाड़ी कहते हैं ॥ १६ ॥

उर्ध्वमुत्पुत्य या गच्छेत्किञ्चिन्मायुप्रकोपतः ।

शाहकबुलन्द सा रुव्याता धमनी संपरीक्षकैः ॥ १७ ॥

अर्थ—जो नाड़ी पित्तके प्रकोपसें उछलकर ऊपरको गमनकरे उसको नाड़ीके ज्ञाता वैद्य शाहकबुलन्द नामक कहते हैं ॥ १७ ॥

चतुरझुलिसंस्थानादपि दीर्घा तवीलसा ।

दराज इति पर्यायस्तस्या एव निपातितः ॥ १८ ॥

अर्थ—जो नाड़ी चारबंगुलसें भी अधिक लंबी हो उसको तवील ऐसा कहते हैं और उसी नाड़ीका नामान्तर दराज है ॥ १८ ॥

परिमाणान्यूनरूपा सा कसीर समीरिता ।

अमीक निम्नगा या च अरीज आयती स्मृता ॥ १९ ॥

अर्थ—जितना नाड़ीका परिमाण कहा है यदि उससें न्यूनहो उसको कसीर कहते हैं और अधोगामिनी नाड़ीको अमीक कहते हैं और लंबी नाड़ीको अरीज कहा है ॥ १९ ॥

यथा गतिस्तु दोषाणां धत्ते प्राज्यतवहीनते ।

गलवे कसूर अरक्षात तारतम्येन निर्दिशेत् ॥ २० ॥

अंर्थ—दोषोंके यथागति अनुसार नाड़ीकी बली और निर्वली जानना इनके बली निर्वली आदि नाडियोंको गलवे कसूर और अरक्षातके तारतम्यसें कहे ॥ २० ॥

वाकियुल्वस्तनिदोषा स्वस्थस्य परिकीर्तिता ।  
इति संक्षेपतो नाडीपरीक्षा कथिता बुधैः ॥ २१ ॥  
विस्तरस्तु मया प्रोक्तो भाषायां जनहेतवे ।

अर्थ—स्वस्थ प्राणीकी निर्दोष नाडीको वाकियुल्वस्त कहते हैं यह मैने संक्षेपते यूनानी मतानुसार नाडीपरीक्षा कही है इसका विस्तार मैने भाषामें कहा है ॥ २० ॥

### यूनानीमतानुसार नाडी कोष्टकम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
गिजालि	मोजी	दूदी	मिन्शारी	जनवुल फार	उम्ली	मतली	मतरकी	जुलफि- करत	वाकल फिल्वस्त
शावक	मग	तरंग	क्रुमि	आरा	मूसेकी पूछ	मोरचेंदी	शलाई	हथोडा	शोकाक्रांत समान
कहते हैं	यह पित्ताधिक्यसौं होती है ।	जो नाडी जलकी तंगके समान गमनकरे उसको मोजी गति कहते हैं । यह तरीको सूचित करती है । अथवा देहकी निर्वलताको सूचित करते हैं । जो नाडी कीड़ाके समान मंद मंद गमनकरे वो कफ और आम दो-पको सूचित करती है । इस नाडीकी गतिको दूदी कहते हैं ।	जैसे लकड़ीके ऊपर आरा चलता इस प्रकार खरदराट लिये जो नाडी ऊंगलियोंका स्पर्शकरे वो बाहर और भातर सूजनको सूचित करती है । इस गतिको मिन्शारी गति कहते हैं ।	जो नाडी चुहेकी पूछसड़ा गमन करे उसको जनवुल्फारगति कहते हैं । यह कफापतके कापसे होती है ।	जो नाडी चेटी और मोरका गतिके समान गमन करे उसको नुमली गति कहते हैं । ऐसी नाडी रोगीकी शीत्र वृत्त्य सूचना करती है ।	जो नाडी सलाईके समान दोनों पाँतोंमें पतली और चाचमें मोटी हो-कर गमन करे उसको मतलीगति कहते हैं । यह निर्वलता सूचना करती है ।	जो नाडी हथोडेके समान ऊंगलियोंको वारंवार चोट देवे उसको म-तरकी गति कहते हैं । यह अत्यंत गरमीकी सूचना करती है ।	जो नाडी गमन करते करते ठहर जावे उसको झुलफिकरगति कहते हैं । यह दिलकी कम्जीरी सूचित करती है प्रायः यह शोक समय होती है । जिस नाडीका ठंकोरदेना जिस वज्रमें देनाउचित है उससे पूर्वही जास्ती ठंकोर देवे यह शासाधिक्य निर्वलतामें होती है ।	

यूनानी भाषामें नाडीको नब्ज कहनेका यह कारण है कि नब्जका अर्थ शिराका तड़फना है वह प्रत्येक मनुष्यकी प्रकृति, देश, काल, अवस्थाओंके भेदसे समान नहीं होती, कुछ न कुछ भेद रहताही है वैद्य जिस स्वस्थमनुष्यकी नाडी

अनेकवार देखी होगी यदि फिर उसकी रोगावस्थामें देखी जाती है तो उसके अंतर्गत नाड़ीका ज्ञान यथार्थ होगा, अन्यथा ज्ञान होना अति दुस्तर है।

नाडीदेखने वालेको वा दिखाने वालेको उचित है कि किसीवस्तुका हाथको सहारा न देवे, न कोई वस्तु पकड़ रख्नीहो, तथारोगीके हाथमें पट्टीआदि बंधनादिक न होवे, यद्यपि बहुतसे वैद्य पहुचे, कनपटी, गुदा, टकने आदि अनेक स्थानकी नाडी देखते हैं, परंतु वहुधा हाथकी देखनेका यह कारण है कि अन्यनाडी सब थोड़ी थोड़ी प्रगटहै शेष हाड मांसमें प्रवेश होनेके कारण अस्त होरही है उसजगे उंगलीयोंको स्पर्श प्रतीत नहीं होसकता परंतु हाथकी नाडी विशदहै अतएव इस-पर उंगली उत्तमरीतिसें धरी जाती है परंतु मुख्य कारण इसका यह है कि किसी स्त्रीकी नाडी देखनेकी आवश्यकता होवे तो वो अन्योन्य अङ्गोंकी नाडी लज्जाके घस नहीं दिखा सकती, परंतु हाथके दिखानेमें किसिकीभी संकोच नहीं होता अतएव सर्वत्र हाथकी नाडी देखना प्रसिद्ध है ॥

अब कहते हैं कि यूनानी वैद्य नाड़ीकी गति दोप्रकारकी वर्णन करते हैं। प्रथम इम्बिसात दूसरी इन्किवाज ।

इम्बिसात ( बाह्यगति )	इन्किवाज ( अभ्यंतरगति )
इम्बिसात उसगतिको कहते हैं जब नाड़ी वाहर आनकर ऊंगलियोंका स्पर्श करती है।	इन्किवाज उसगतिको कहते हैं कि जब नाड़ी ऊंगलियोंका स्पर्शकर भीतरको प्रवेश करती है।

दोषः खिल्त इति प्रोक्तः स चतुर्धा निरूप्यते ।

सौदा सफरा तथा वल्गम् तुरीयं खून उच्यते ॥ २१ ॥

यूनानीमें दोष शब्दको स्थिति कहते हैं वह चार प्रकारकहै जैसे सौदा (वात) सफरा (पित बलगम् (कफ) और चौथा दोष खून (रुधिर) हैं परंतु अपने शास्त्रमें दूष्यहोनेसे इसको दोष नहीं माना यह शारीरकमें हम लिख आएहै ॥ २१ ॥

प्रत्येक दोषमें दोदोगुण हैं यथा ।

तत्र सौदा धरातत्वं रुक्षं शीतं स्वभावतः । पित्तमझे: स्व-  
रुपन्तु सफरा रुक्षउष्णकम् ॥ २२ ॥ वल्गमवारिस्वरुपं  
स्यात्सकफः स्निग्धशीतलः । अस्त्रं वायुः खून इति स्नि-  
ग्धोष्णं तेषु तद्वरम् ॥ २३ ॥

## नाडीदर्पणः ।

तहाँ सौदा अर्थात् वातमें पृथ्वीतत्व अधिकहै अतएव वातस्वभावसे ही रक्षा और शीतलहै पित्तमें अग्रितत्व विशेषहै अतएव सफरा पित्त रक्षा और उष्ण है बलगम (कफ) में जलतत्व अधिक होनेसे स्निग्ध शीतल गुणवालाहै खून (स्थिर) में वायुतत्व अधिक होनेसे स्निग्ध और उष्णहै अतएव अन्य दोषोंकी अपेक्षा यह स्थिर अष्ट है ।

इस प्रकार दोषोंके गुणोंका विचारकर उक्त नाडीके लक्षणोंसे मिलाकर द्रुंदज गुण अपनी बुद्धिसे कल्पना करै ।

जैसे जो नाडी दीर्घ और स्थूलहो उसको गरमतर गुणविशिष्ट होनेसे रुक्षरकी जाननी और जो नाडी दीर्घ तथा पतली होवे उसमें गरम और खुप गुण होनेसे पित्तकी जाननी जो हस्व और मोटीहो वुह शरद और तर गुणवाली होनेसे कफकी जाननी और जो नाडी हस्व और पतली होवे उसमें शरद और खुप गुणहोनेसे वातकी नाडी जाननी चाहिये ।

इम्वसातके भेद ।

तवील (दीर्घकार)		अरीज (स्थूलकार)		उमक (वर्हिगत्याकार)	
मुअदिल समान	कसीर हस्व २	तवील १ दीर्घ	अरीज स्थूल	ज्यैयकवा जीक (कृष)	मुअदिल समान
यदि नाडी चार अंगुलसे कुछभी न्यूनाधिक नहो किंतु सम- हो तो उसप्रणालीके शरदी गरमी समान जाननी ।	और चार अंगुलसे न्यून होवे तो वी शरदीके लक्षण वाली जाननी अर्थात् ऐसे पुरुषके शरदी जानना ।	जो नाडी पहचासे भुजाके प्रति चार अंगुलसे अधिक लंबी प्रतितहो तो वी गरमीके लक्षणवाली जाननी ।	यदि नाडी तर्जनी उंगलीसे लेकर कनिष्ठिका पर्यंत स्थूल प्रतित होवे तो वी तर अर्थात् जैसे स्थिर और कफमें ।	जो नाडी पतली प्रतितहोवे उसको रुक्ष अर्थात् खुपके क- होतीहै । जैसे पित्त और वातकोपमे होतीहै ।	जो नाडी न स्थूलहो न कुशलहोवे किंतु समानहो उसमें त- रीठकठिक होतीहै ।
जो नाडी अत्यंत उड़लकर बल्मुखके उंगलियोंको स्पर्शकरे उसमें गरमीका आधिक्यता प्रतीत होतीहै ।	जो नाडी हवसे कमज़ुल नी उठे अर्थात् धीरे उंगलियोंको स्प- र्शकरे गरमी उसमें न्यूनता प्रतीत होतीहै । किंतु शरदीको बोतन करतीहै ।	जो नाडी न बहुत उभरी हुईहो न बहुत बिलकुल दर्शि- हो हो किंतु समानहो इसमें गरमी होतीहै ।			

अब जानना चाहिये कि हिक्मतमें दोष चारप्रकारके कहे हैं यथा ।

# युनानी मतानुसार नाडी परीक्षा

५८

## अन्यचक्र

१	जो नाडी उगलियोंके मांसमें जोरसे धक्कादेवेकर ऊची उठावे तो हृदयकी प्रबलता जाने।	शीघ्रचरिणी	सबल
२	और यदि नाडी उगलियोंको स्पर्शकर दबानावे तो हृदयकी उर्बेलता जाननी।	मंदचारी	उर्बेल
३	और जो नाडी न बहुत जोरसे लोगे वो दिलकी समताको प्राट करतीहै।	समता	मोतदिल
४	जो नाडी शीघ्र आवा गमनकरे वो देहमें गरमीकी विशेषता घोतन करतीहै।	समता	सरी
५	और थोरे थोरे आवा गमनकरे वो देहमें सरदीकी आधिक्यता घोतन करतीहै।	मंदचारी	वर्ती
६	जो नाडी मध्यम चालसे आवा गमन करे वो सरदी गरमीकी समानता प्राट करतीहै।	शीघ्रचारी	मोआदिल
७	जो नाडी दाढ़नेसे सहज दबानावे तुमसको तरस्तिग्रथ कहतेहैं, इसे फारसीमें लोत कहतेहैं।	गरम	मुट्ठ
८	और जो दबानेसे न दबे वह खुफ्क जाननी उसको फारसीमें सल्ल कहतेहैं।	सखरक	कटिण
९	जिसमें मध्यम गुणहो अर्थात् न बहुत कठोर न बहुत नम्र वो मोतदिल जाननी।	मोआदिल	सम
१०	जो नाडी मोटी और शीघ्र चलतीहो वह सफिर और मवादसे भरी है जानना अवश्य जीविस परिपूर्ण जानना।	मुमतिला	सुधिरपूर्ण
११	और जो नाडी खाली होतीहो वो मद और पतली होतीहो उसमें थोड़ा सधिर और मवाद जानना।	खाली	स्वल्पस्वधिर
१२	और जब नाडी न भरीहो वो समान कहलातीहै। इसमें मवाद ठिक होताहै।	माहिल	समता
१३	जिस समय नाडीका स्पर्श गरम प्रतीतहो तब रुधिरमें जवर वा गरसी जानना।	गरम	उण्ण
१४	और जिस समय स्पर्शमें शीतलता प्रतीतहो तब रुधिरमें सरदीकी आधिक्यता जाने।	सरद	शीत
१५	जिस समय नाडीमें शीत उणता समान प्रतीतहो उसको सम कहतेहैं।	मोआदिल	सम
१६	जो नाडी कमसे कम ३९ वार एंकोर देनेमें कई वार दूरजावे अर्थात् ठहर कर चले वो असाध्यहै।	उसतचा	पूर्वसवृशा
१७	जो ३५ वार एंकोर देनेमें कई वार दूरजावे अर्थात् ठहर कर चले वो असाध्यहै।	इलितलाप	विपरीत
१८	जो बहुतवर न दे किन्तु अल्पवार दृटकर फिर शीघ्र चलते लो उसको थाय जानना।	मोआदिल	समता
१९	जो नाडी उगलियोंको स्पर्शकरके शीघ्र नीचे चलीजावे वो निर्वल जाननी।	मुतवातर	अल्पत
२०	जो नाडी उगलियोंको कुछकालतक स्पर्शकरे उसको चलवान् कहतेहैं।	मुतफावत	थेर्थ
२१	और जो समान रीतिसे उगलियोंका स्पर्शकरे उसको समान स्थिति वाली जाननी।	मोहिल	समता

प्रत्येक प्रस्तारके नो नो भेद होते हैं लंबाव चौडावा और गहराई इन तीनोंके प्रमाणको हकीम लोग कुतर कहते हैं ।

उन दो तीन कुतरोंको एकत्र करो अर्थात् प्रस्तार करो तो दोप्रस्तार २७ सत्ता ईस सत्ताईस के होते हैं जैसे आगेके दोनो चक्रोंमें लिखे हैं दोनो प्रस्तार करनेकी यह रिति है कि तीनप्रकारके लंबावको तीन प्रकारोंकी चौडाईके साथ गुणदेवे तो नो होवेगी इसीप्रकार लंबाई और गहराईयोंको तथा चौडाई और गहराईकी तीन तीन प्रकारोंके साथ मिलनेसे नो नो भेद होते हैं इसप्रकार तीनो सत्ताईस सत्ताईस भेद होते हैं इसका उदाहरण आगे चक्रोंसे समझना चाहिये इस गुणनको फारसीबाले सनाई कहते हैं ।

नाडीनां प्रस्तारचक्रम् ।															
सनाई (द्विगुण)								सलासी (त्रिगुण)							
द	द	द	ह	ह	ह	य	य	द	द	द	द	द	द	द	द
स	क	य	स	क	य	स	क	य	स	स	क	क	क	क	य
व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	य
द	द	द	ह	ह	ह	य	य	ह	ह	ह	ह	ह	ह	ह	ह
व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	य
स	स	स	क	क	क	य	य	स	स	क	क	क	क	य	य
व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	व	अं	य	य

इन दोनो चक्रोंमें जो अक्षर है उनमें द से दीर्घ, ह से च्छस्व, और य से यथार्थ कहिये समान जानना उसीप्रकार स से स्थूल, क से कृश व से बहिर्गत अ से अंतरगतकी समस्या जानलेनी चाहिये ।

इति श्रीवृहन्निधंदुरल्लाकरे नाडीदर्पणे यूनानीमतानुसार नाडीपरीक्षणे तरङ्गः

## PULSE EXAMIN.

अर्थैङ्गलंडीयमतेन नाडीपरीक्षा

ऐंगलंडीयभाषायां नाडी पल्सेति शब्दिता । तस्याः परोक्षापरोक्षभेदेन द्विविधा गतिः ॥ १ ॥ द्रष्टुर्याङ्गलिसंस्पर्श

**परोक्षा न करोति सा । करोति या साऽपरोक्षाङ्गलिस्पर्शञ्च  
पश्यतः ॥ २ ॥**

अर्थ—इंगलैंड अर्थात् अंगरेजीमें नाड़ीको पल्स Pulse कहते हैं वह दो प्रकारकी हैं एक परोक्ष और दूसरी अपरोक्ष तहाँ जो नाड़ी देखनेवालेकी अंगलियोंका स्पर्श न करे वह परोक्ष कहाती है और जो अंगलियोंका स्पर्श करे वो अपरोक्ष अर्थात् प्रत्यक्ष नाड़ी कहाती हैं ।

**उत्थानापेक्षया पुंस आसने तदपेक्षया । शयने नाड़ीका  
वेगो मन्दी भवति नानुतम् ॥ ३ ॥ सायंतनाद्वि समया-  
त्यातःकालेऽधिका गतेः । वेगसंख्या भवेत्प्रदाकाले ह्वासं  
च गच्छति ॥ ४ ॥**

अर्थ—जहाँ होनेकी अपेक्षा (वनिसवत्) बैठनमें और बैठनेकी अपेक्षा सोनेमें नाड़ीकी गति घटजाती है । उसीप्रकार सायंकालकी अपेक्षा ग्रातःकालमें नाड़ीकी गति बढ़जाती है । और निद्रामें नाड़ीकी संख्या घटजाती है ॥ ४ ॥

**भोजनस्याथ समये वेगसंख्या विवर्द्धते । अहिफेनसुरादी  
नामुष्णानां यदि भोजनम् ॥ ५ ॥ बुभुक्षावसरे नाड़ी ग-  
तेवेगो ह्वसत्यलम् । एषा नाड़ी गतेवेगचर्या सामान्यतो  
मता ॥ ६ ॥**

अर्थ—यदि अफीम मध्य ओढ़ि गरमवस्तु खायती उस गरम भोजनके कारण नाड़ीकी संख्या घटजाती है, और अत्यंत शीतलवस्तु खानेसे नाड़ीकी संख्या न्यून होजाती है, यह अर्थात् जाना जाता है । उसीप्रकार भोजनके समय नाड़ीका वेग मंद होजाता है, यह नाड़ीकी सामान्य गति संख्या कही है ।

नाड़ीकी व्यवस्था जाननेके लिये वैद्यको प्रथम इतनी वस्तुओंका जानना आति आवश्यकहै । जैसे प्रथम नाड़ी देखनेकी विधि दूसरे आरोग्यवस्थाकी नाड़ी तीसरे रोगवस्थाकी नाड़ी और चतुर्थ नाड़ी देखनेका यंत्र ।

? नाड़ीदेखनेकी विधि—नाड़ी देखनेके जो नियम वैद्योंने निश्चितकर रखते हैं, यदि उनके अनुसार न देखी जावती हम जानते हैं कि नाड़ीका यथार्थज्ञान होना ज्ञाति असंभवहै । अतएव अब उन नियमोंको वर्णन करते हैं ।

प्रथम—वैद्य या रोगी कहीसे चलकर आया हो तो उचितहै कि थोड़ीदेर विश्राम

लेकर फिर नाडी देखे या दिखावे, तथा परिश्रमकी अवस्थामें और शोधक विचारके समयभी नाडी न देखे ऐसे समयकी नाडी विश्वास योग्य नहीं है ।

**दूसरे-**रोगीको विठ्ठलाकर या लिटाकर यदि कोई आवश्यकता होयतो खड़ा करके रेडिअल आर्टेरी Radial Artery (जो पहुचेमें अंगूठेकी जड़में त्वचाके भीतरहै उसपर वरावर तीन उंगली रखकर नाडी देखना, परन्तु कभी पहुचेकी देखना असंभव होयतो अन्योन्य स्थानकी देखे, जैसै मस्तक संबंधी रोगमें कनपटीकी नाडी तथा गठियामें पहुचेपर पटी बंधीहो अथवा दोनो हाथ कटगए हो तो प्रगंड (वाजू) की नाडी देखे, और कभी पैरमें टकनेके नीचे भीतरकी तरफ पोस्टीरिओर टीबीअल Posterior Tibial नाडीको देखते है ।

**तीसरे-**वैद्यको रोगिके दोनों हाथोंकी नाडी देखनी चाहिये, इसका यह कारण है कि ऐसा देखा गयाहै, कि एक ओरकी नाडी दूसरी नाडीसे बड़ी होती है । और यहभी स्मरण रखना कि दहने हाथकी वामहाथसें और वामहाथकी दहने हाथसें नाडी देखे इसमें सरलता रहती है ।

**चतुर्थ-**स्त्रीकी नाडी दहने हाथकी अपेक्षा वामहाथकी उत्तमरीतिसें विदित होती है इससे प्रतीत होताहै कि स्त्रियोंकी वाए हाथकी नाडी कुछ बड़ी होती है । हिंदुस्थानी वैद्य जो स्त्रीके वामकरकी नाडी देखतहै कदाचित् उसका यही कारण न होय ।

**पांचवे-**नाडीकी स्पन्दन संख्या अर्थात् शीघ्रगति और मंदगति जाननेके पश्चात् उसके बलाबल जाननेको कुछ दवाकर फिर ढीली छोड़देवे, जिससे यह प्रतीत होजावे कि नाडी दवानेसें कितनी दवती है । परन्तु इतनी न दवावे कि जिससे सूधिरका भ्रमण बन्दहोजावे, केवल इतनी दावेकि जिससे नाडीकी तड़फ प्रतीत होती रहे ।

**छठे-**धैर्यरहित पुरुषोंकी या अत्यंत डरपोककी नाडी देखतो उनका ध्यान वार्तालापमें लगाय लेवे, इसका यह कारणहै कि ऐसे मनुष्योंकैं तुच्छकारणसें हृदयकी खटक न्यून होजातीहै । अतएव नाडीका वृत्तान्त ठीक ठीक निश्चय नहीं होता ।

अब कहतेहै कि रुदन करनेसें और मचलनेसें घालकोंके पहुचेकी नाडीका देखना कठिनहै । इसवास्ते उनको गोदीमें बैठाल खिलौने आदिका लोभ देके उनके छातीपर कान लगाकर हृदयकी धडधडाटका निश्चय करना । यदि नाडी काही देखना जरूरी होवेतो निद्रा अवस्थामें देखनी चाहिये ।

**सातमे-**नाडी देखनेके समय यहभी अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि नाडी-

पर किसी प्रकारका दबाव नहीं जैसे वंध, अथवा तंगी, या रसौली, वा घोटू आदिका सहारा नहोवे । क्षणिक और मानसिक रोगोंमें अनेकवार नाड़ी देखनी चाहिये कि जिससे रोग भलेप्रकार समझमें आयजावे ।

आरोग्यावस्थाकी नाड़ी ।

मध्यम श्रेणीके युवापुरुषोंकी नाड़ी आरोग्यावस्थामें साथ प्रवंधके कुछ दबने वाली और कुछ भरीहुई होती है । परंतु चिन्ह भेद और अवस्था तथा स्वभावादि भेदसे नाड़ीमें अंतर होजाताहै और वालिकाओंकी नाड़ी पुरुषोंकी अपेक्षा कुछ छोटी होती है और शीघ्रचारिणी होती है दंभी प्रकृतिवालोंकी नाड़ी भरीहुई, कठोर, और शीघ्रगामिनी होती है कोमलस्वभाववाले मनुष्योंकी नाड़ी धीरे धीरे चले हैं और नम्र होती है । वृद्धावस्थामें कठोर होती है ।

नाड़ीकी स्पन्दनसंख्या (जिनका निश्चय करना नाड़ीकी और अवस्थाओंसे सुगम है) सदैव हृतपञ्चके संकुचित खटकेके समान होती है । इससे कदापि अधिक नहीं होती, परंतु अपस्मार आदि चित्तके रोग और मूर्च्छा आदिमें एक दो गति न्यून होजाती है ।

छोटे बालककी नाड़ीकी गति अधिक होती है, फिर जैसे जैसे अवस्थाकी वृद्धि होती है उसी प्रकार ऋमसे नाड़ीकी स्पन्दन संख्या न्यून होती जाती है परंतु वृद्धावस्थामें फिर कुछ कुछ बढ़ती है ।

अवस्थानुसारनाडीकीगति	
गतिप्रमाण	अवस्था
१४०	सदैव प्रसूत बालककी
१२० से १३० तक	दूधपीनेवाले बालककी
१००	५ वर्षसे ६ वर्ष तकके बालककी
९०	१५ वर्षतकवाले नवयुवावस्थामें
७० से ७५	३५ वर्षतक आर्थात् युवावस्थामें
७०	३५वर्षसे लेकर ५० वर्ष बालोंकी आर्थात् वृद्धावस्थामें
७५ से ८० तक	अति वृद्धावस्थामें

इस चक्रमें जो नाड़ीकी संख्या है वह आरोग्यपुरुषके लिये ठीक है । परंतु रोगावस्थाते न्यूनाधिक होजाती है । यदि नैरोग्यपुरुषकी नाड़ीकी गति १ मिट्टमें ७२ बार हो और स्त्रीकी ८२ बार होय तो ठीक जाननी, स्त्रीकी १० गति पुरुषसे सदैव अधिक होती है । और गर्भ-सूजन, ज्वर, अतिदुर्बलता, जागना, झौं, थोराके प्रथमदर्जासे लान्वस्थिर, क्रोध, जोश आदिमें ७० या अस्सीसे १०० या १२० वरंच २०० तक नाड़ीकी गति संख्या प्रत्येक मिट्टमें ही जाती है एवं सरदी अलस्य, निद्रा, कुछ थकावट,

क्षुधामें, हवाके दवावमें, बेफिकरीमें, इत्यादि कारणोंसे नाडीकी गति ऐसी न्यून होजातीहै कि प्रत्येक मिनटमें ६० या ३५ तकही रहजाती है ।

रोगावस्थाकी नाडी ।

रोगावस्थामें नाडीकी गति संस्था और अन्य अन्य लक्षणोंमें विशेष अंतर होताहै जैसे आगे लिखत है ।

ज्वर, प्रदर, बमन, विरेचन, बुहरान, इत्यादि रोगोंमें नाडी इतनी शीघ्र चलती है कि गणना करना कठिन होजाता है यदि ज्वरावस्थामें अकस्मात् नाडी मंदपड़जावे सथा उसके साथ अन्य अशुभ लक्षणोंकी आधिक्यता होवे तो उसप्राणीके प्रस्तकमें किसीप्रकारके विप्रसें सच्चा या पक्षघात होकर रोगिके मरनेका भय रहता है ।

जाति संख्याके शिवाय नाडीमें जो वृत्तान्त निश्चय होताहै, उसको आगे कहते हैं ।  
नाडीकीइंग्रेजीसंज्ञा ।

आनन्दादितरावस्था स्वानन्दापेक्षया गतेः ।

वेगसंख्या वर्द्धते सा नाडीन्फ्रीकैंटशब्दिता ॥ १ ॥

अर्थ—आनन्दकी अपेक्षा जिस नाडीकी संख्या अधिक वेगवान् हो उसको इंग्रेजीमें Frequent फ्रीकैंट कहते हैं ।

आनन्दादितरावस्था स्वानन्दापेक्षया गतेः ।

वेगसंख्या हसति सा नाडीन्फ्रीकैंटशब्दिता ॥ २ ॥

अर्थ—जिस नाडीमें आनन्दकी अपेक्षा स्पन्दन संख्या न्यून होय उसमंद चारिणी नाडीको अंग्रेजीमें Infrequent इनफ्रीकैंट कहते हैं ।

चिरकालधृतायां च नाड्यां संख्या न वर्द्धते ।

न वा हसति वेगस्य सा च रैग्यूलरभिधा ॥ ३ ॥

अर्थ—जिस नाडीपर बहुतदेरीतक हाथधरनेपरभी कुछ न्यूनाधिक्य प्रतीत न होय उस नाडीको इंग्रेजीमें Regular रैग्यूलर कहते हैं ।

चिरकालधृतायां नाड्यां संख्या विवर्द्धते ।

मन्दी भवति चावस्था सेरैग्यूलरशब्दिता ॥ ४ ॥

अर्थ—जो नाडी बहुतदेरी हाथरखनेसे कुछ न्यून्याधिक्य प्रतीत होय उस अवस्थाको डाक्टरलोग Irregular इरेग्यूलर कहते हैं ।

सकृदङ्गुलिसंस्पर्शादन्तर्धनन्तु गच्छति ।  
इन्टरमिटेंटा भिधा साऽसृक्फाशयदूषिणी ॥ ६ ॥

अर्थ—जो नाडी एकवार उँगलियोंका स्पर्शकर छिपजावे, वह रुधिर और कफाशयको दूषितकर्त्ता हृदयसंबंधी व्याधिको उत्पन्नकरे इसको इंग्लंडीयवैद्य Intermittent इन्टरमिटेंट कहते है ॥ ६ ॥

यदा रक्तेन पूर्णत्वमापन्ना नाडीका भवेत् ।

तदा फुल् शब्दविरुद्धाताथवा लाजेति विश्रुता ॥ ६ ॥

अर्थ—जिस समय नाडीं रुधिरसें परिपूर्ण होती है उसको डाक्टरलोग फुल् या Full Large लार्ज ऐसा कहते है ॥ ६ ॥

यस्यां हृत्कमलोच्चासाद्रक्तमल्पं वहेत्तु सा ।

रिक्तानाडी स्माल संज्ञा समारब्धाताइश्चभाषया ॥ ७ ॥

अर्थ—जिस समय हृदयसें रुधिर अल्पप्रगटहोय उस रिक्तनाडीको पाथिमात्यवैद्य Equal इस्माल ऐसा कहते है ॥ ७ ॥

या वै गुणवदातन्वी नाडी क्षीणत्वशांसिनी ।

रक्ताऽक्ततां घोतयन्ती सा श्रेडीपल्संज्ञिता ॥ ८ ॥

अर्थ—जो नाडी डोरेके माफिक बहुतवारिक प्रतीत हीय वह क्षीणता और रक्तकी अल्पताको प्रकाश करने वालीको Thready pulse श्रेडीपल्स कहते है ॥ ८ ॥

अङ्गुलीभिर्यदा नाडी पीडितापि न नम्रताम् ।

ब्रजेत्तदातिरुक्षत्वद्योतिनीहार्डशब्दिता ॥ ९ ॥

अर्थ—जो नाडी उँगलियोंके पीडनसेंभी अर्थात् दाबनेसेंभी नम्र न होवे को रुक्षताकी घोतनकरता नाडीकी डाक्टरजन Hard हार्ड ऐसा कहते है ॥ ९ ॥

अङ्गुलीभिर्यदा नाडी पीडिता नम्रतां ब्रजेत् ।

सार्द्रत्वद्योतिनी मृद्दी साफ्ट शब्देन शब्दिता ॥ १० ॥

अर्थ—जो नाडी उँगलियोंके दबानेसें दबजावे उस मृदुनाडीको साफ्ट ऐस कहते है यह आर्द्रत्वको घोतन करती है ॥ १० ॥

प्रतिस्पन्दं शीत्रतायां संख्या यस्या न वर्द्धते ।

सकृच्छ्रेड्यधरा तूर्णगा नाडी कीकु शब्दिता ॥ ११ ॥

अर्थ—जिस नाडीमेंकी प्रत्येक तडफ शीघ्रभी होय परंतु स्पन्दन संख्या न बढे किंतु एकवारही जलदीकरे उस तूष्णगामिनी नाडीको इंग्लैडीय वैद्य Quick कीक ऐसा कहते हैं यह निर्वलताको धोतन करती है ॥ ११ ॥

यस्या मन्दगतिर्था च नाडी पूर्णा भवेत् सा ।

स्लोशब्दशब्दान्विता ज्ञेया रत्नकोपप्रकाशिनी ॥ १२ ॥

अर्थ—जो नाडी मंदगतिहो और परिपूर्णहो वह सूधिरकोपके प्रकाश करनेवाली नाडीको इंग्लैडीय वैद्य Slow स्लो कहते हैं ॥ १२ ॥

खूनकी गतिके कारण नाडीके अनेक भेद हैं जैसैं आर्योटा Poorla Water Hamr वाटरहेमर Bounding वौडिंग Lavauering लेवरिंग Thriling Pulse थ्रिलिंग पल्स Readoudled रिडवल Dicrratores या डाईक्रोटस और इसीटेट-आदि हैं । जो लहरके समान ऊंगलियोंको लगकर हटजावे उसको जर्किंग अर्थात् झटके दार नाडी कहते हैं । किवारोंकी रिगड़के माफिक आर्योटा होती है । उछलनेवाली नाडीको वौडिंग कहते हैं, जो नाडी काँपती हो उसको थ्रिलिंगपल्स कहते हैं । इसीप्रकार अन्य सब नाडियोंकी गतिको बुद्धिवान् डाक्टरद्वारा और उनके ग्रंथोंसे जाननी इसजगे ग्रंथविस्तारके भयसैं नहीं लिखी ।

### नाडीदर्शक यंत्र ।

नाडी देखनेके लिये अंग्रेजी डाक्टरोंने एक यंत्र निर्माण करा है उसको अंग्रेजी वोलीमें स्फिग्मोग्राफ Sphygmograph कहते हैं इसमें अनेक टुकडे होते हैं विना दृष्टिगोचर हुये उनका समझना मुसाकिल है इसलिये उस यंत्रकी तसवीर जो इस नाडीदर्पणग्रंथके पिछाड़ी हैं उससैं समझना उसके आवश्यक विभागोंका कुछ इस से जगे वर्णन करते हैं ।

अ—पटलीके चलाने और रोकनेका खूटी ।

क—तालील गानेकी कमानी ।

च—नाडीके कम्बआधिक दवाव करनेका गोलाकार चक्रविशेष ।

ट—कज्जलसैं रंजित कागज धरनेकी जगह ।

त—चिन्हित होनेके पश्चात् जो कागज निकलता है ।

प—जिनसैं कागजपर चिन्ह होते हैं वो सूई ।

इस यंत्रके लगानेकी यह विधि है कि जब हाँतीदाँतवाले स्थानको रेडियल-पर धरकर यंत्रको काममें लाते हैं तो नाडीकी तडफ कमानीको लगती है जिसके द्वारा सूईसैं कागजपर लहरदार रेखा प्रकट होती है । कि जिनसैं हृदयके घडनेका

अथ डाक्टरीमतानुसार नाडीचक्रम्

नाडीयोंकी व्यवस्था	संख्याम्	संख्याम्	इंग्रेजी नाम	संख्या
हृदयके स्वरकारके संख्यानुसारनाडी दोप्रकारकी है पहली फ़ीकेंट इसमें आरोग्य अवस्थाकी अपेक्षा गति संख्या अधिक होती है।	शूष्रित्या रिणी	Frequent	फ्रिकेंट	२०
दूसरी इन्फ्रीकेंट इसकी दशा फ़ीकेंटसे विपरित होती है यह ख्याशीके बातगुलम रोगमें होती है। हृदयकी गतिके प्रबंधनासारी नाडीकी दो अवस्था पाई जाती है एक रेग्युलर, नाडीनमें क्रमानुसार चयि जानेवाली नाडीकी रेग्युलर कहते हैं इसपर हाथ रखनेसे गति एकसी मालूम हो और कभी बीचमें अंतर नहीं पड़ता।	मंदगामिनी	Infrequent	इन्फ्रीकेंट	२१
दूसरी इरेग्युलर अर्थात् नाडीनमें कमके विपरित रुधि जाप इसपर हाथ रखनेसे गति एकसी प्रतीत नहीं होती और बीचमें अंतर पड़ जाता है रोगावस्थामें नाडीका सम्बंधित अर्थात् क्रमानुसार चलना अन्धाहै।	साधानता सूचक	Regulars	रेग्यूलर्स	२२
लिस नाडीके तड़फ़ होनेमें जितना काल जाता है उससे अधिक होजाय अर्थात् हूसरी गति काभी कालन्यतीत होनावे उसको इंटरमिटेंट कहते हैं परं गतिके भेदसे यह दोप्रकारकी है एक रियलर इन्टरमिटेंट और दूसरी इरेग्युलर इन्टरमिटेंट है।	असाधान ता सूचक	Irregulars	इरेग्यूलर्स	२३
मस्तकके सूजनमें अन्यकारणांत्र नाडीमें अधिक सूधर पहुँच और उत्पुक्त नाडीका उत्पुक्त अधिक प्रतीतहो तो उसनाडीको मुल या लार्ज कहते हैं यह अधिक रुधि बुद्धिमें अथवा कठोरतों प्रतीत होती है। जो नाडी फुल लार्जके विपरितहो अर्थात् नाडीमें अल्प रुधि रुहुचे और नाडीका उत्पुक्त उत्पुक्त नाडीयोंको थोड़ा प्रतीतहो उसनाडीको स्माल अर्थात् वारिक नाडी कहते हैं।	परिपूर्ण	Full या Large	फुल या लार्ज	२४
जब नाडी असंतृप्त समानहो तो उसको इंग्रेजीमें श्रेडीप्लस कहते हैं यह सूधिर की न्यायावस्था अथवा दुर्बलतामें देखी जाती है।	रिक्त	Esmal	इस्माल	२५
नाडीकी दिवारकी लचकके उल्यनाडीकी दीगति होती है एक हार्ड अर्थात् कठोर इसे किञ्चन्मात्रामें दर्शानेसे उंगलियोंकी कठोरता प्रतीत होती है यह नाडीकी अधिक लचकके कारण होती है। द्वितीय साफ्ट या नम्र जिसकी दशा हार्ड नाडीके विपरित होती है यह नाडीके अनुरोध ( नाडीयोंकी दिवार ) की लचकसे और देहके निर्वलतामें पाई जाती है।	सूक्ष्मतर	Thready Pulse	श्रेडीप्लस	२६
नाडीकी गतिमें जो समय व्यतीत होता है उसके अनुसार नाडी द्विविध होती है एक क्वीक अर्थात् शाश्वत्यारणी नाडीकी प्रत्येक गति श्रिय शोष्य होती है परं एक अथवा मानसिक रोगोंमें जिनमें स्वभाव दृश्य हो उनमें पाइजाती है। जो क्वीक नाडीके विपरितहो अर्थात् सुस्तहो उसको स्लो नाडी कहते हैं।	कठिन	Hard	हार्ड	२७
	मुट्ठ	Soft	साफ्ट	२८
	शौश्रगा मिनी	Quick	क्वीक	२९
	धीरगामिनी	Slow	स्लो	३०

हाल और रुधिरभ्रमणका वृत्तान्त उत्तमरीतीसें प्रतीत होता है । प्रत्येक लहरमें एक रेखा उठनेकी होती है फिर मुडनेकी और फिर उत्तरनेकी तथा उत्तरनेकी लहरमें दो लहर प्रगट होती है इन लहरोंकाभी चिन्ह स्फग्मोग्राफ यंत्रमें लिसा है सो देखलेना ।

खडीरेखा हृदयके संकोच होनेसें होती है और मुरडनेका कोना नाडियोंके किसीप्रकार संकोचसें होताहै और जिससमय हृदयके संकोचसें रुधिर अयार्टमें पहुँचताहै तो पहली रेखा प्रगट होती है फिर अयार्टके किवाड बंदहोनेसें दूसरी लहर खांचेतक बनती है अयार्टके सुकडनेके पीछे रुधिर आगेको बढ़जाताहै और दूसरी लहर परिपूर्ण होकर एकवार हृदयके खटकेकी चिन्हतरेखा संपूर्ण होनाती है ।

इति नाडीदर्पणे ऐंग्लेंडीयनाडीपरीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकः ।

इति श्रीमाथुर कृष्णलालपुत्रदत्तरामेण सङ्कलिते आयुर्वेदोद्धारे वृहन्निवण्टुर-  
क्लाकरान्तर्गते नाडीदर्पणे ऐंग्लेंडीयनाडीपरीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकशास्त्रं-  
शस्तरङ्गः ॥ ३८ ॥

समाप्तोयनाडीदर्पणाख्यो ग्रन्थः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—  
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास  
“लक्ष्मीविक्रेत्रवर” छापाखाना  
कल्याण—मुंबई.

# लक्ष्मीवेङ्कटेश्वरायनमः ।

## कोकिलाब्रतभाहात्म्यस्थ

## सूचनापत्रम् ।

इह तावद्वज्ञाणडान्तर्वार्तिनवखण्डभूमण्डलशिखण्डीभूतकर्मका-  
ण्डस्थलभरतखण्डे स्ववर्णाश्रिमधर्माचरणश्रद्धावतां जनानाम् इहा-  
मुत्रेष्टफलावासिसाधनानि नित्यनैमित्तिककाम्यानि नानाब्रतक-  
र्मादीनि प्रासिद्धानि सन्ति । तथैव तत्तद्वतादिविधिप्रतिपादकब्रता  
कंब्रतराजादयोपि ग्रन्थाः प्रसिद्धः । तेषु स्त्रीणां जन्मनि जन्मान्तरेच  
सौभाग्यादि प्रिययोगभोगदं कोकिलानामकं ब्रतं तदेवतार्चनोद्याप-  
नादिविधिस्तदितिहासश्च कथितोस्ति खलु । तथापि स संक्षिप्त एव ।  
अतो मया वहुप्रयत्नतः कस्यचित् विद्विप्रस्थ सकाशात् स्कन्द  
युराणान्तर्गतकनकाद्रिखण्डस्थैकर्विशदव्यायात्मकं शिवनारदसं-  
वादरूपं साद्यन्तं मनोरमं कोकिलाब्रतोत्पत्तिहेतुभूतं दग्धदेहपार्व-  
त्याः कोकिलाजन्मप्रातिकथोपद्वंहितं कोकिलायाहात्म्यं समाहृत्य  
शम्भिः शोधयित्या सटिप्पणम् कारयित्वा च अस्मद्लक्ष्मीवेङ्क-  
टेश्वराख्येङ्कनयन्त्रे सल्लितसीसकाक्षैर्मुद्रितमस्ति । यस्मिन् वर्षे-  
धिकाषाढस्तस्मिन्नेव वर्षे शुद्धापाठपूर्णिमामारभ्य मासपर्यन्तं  
प्रत्यहं स्नानदानार्चनभाहात्म्यश्रवणविधियुक्तकोकिलाब्रताचरणं  
स्त्रीभिःकार्यमित्युक्तम् । स ब्रताचरणकालोऽस्मिन्नेव वर्षेऽधिका-  
षाढप्रातेरागन्तेति संप्रत्येवैतन्माहात्म्योपयोगः सर्वासां ब्रताचरण  
शीलानांसम्यग् भविष्यतीति ज्ञात्वा ज्ञातिति संबुद्ध्य प्रकाशितम् ।  
तस्मात् तन्मुद्रणायासम् आस्तिकशाहकाः सफलीकुर्वन्त्वति  
सविनयेयंमत्प्रार्थना ! ग्राहकाणां माहात्म्यपुस्तकानि योग्यमूल्येन  
मिलिष्यन्तीत्यलं विस्तरेण ।

तनिश्चोक्याख्यया भूषणाख्यया रामानुजी  
 याख्यया च व्याख्यया समेतस्य  
 श्रीवाल्मीकिरामायणस्य  
**प्रशिद्धिपत्रिका ।**

भो भो विद्यापारावारपारीणा इदं विदाङ्गुर्वन्त्वन्त्रभवन्तः—तनिश्चोक्याख्य-  
 या भूषणाख्यया रामानुजीयाख्यया च व्याख्यया समेतं श्रीवाल्मीकिरामाय-  
 णम् अत्युत्तमतैलङ्गदेशीयपुस्तकमालोच्य पण्डितैः संशोधितं, तच्च सम्प्रति-  
 सुव्यक्तैः स्थूलसूक्ष्माक्षरेर्लक्ष्मीवेङ्गुटेश्वरमुद्रणयन्त्रे मुद्रयते, तस्य च नागेशप्रमूति-  
 विनिर्मिताः सन्ति यद्यपि बहुचो व्याख्याः, तथापि सहदयहृदयाह्लादकनाना-  
 विद्याऽपूर्वार्थान्वेषणे प्रयतमानैरार्यकुलोचितधर्मस्मर्यादाविचारशलैर्महाशयैर्निर्वि�-  
 शेषत्वेन सविशेषत्वेन च ब्रह्मस्वरूपप्रतिपादकवेदान्तवाक्यानां समीचीनतर्क-  
 सहकृतविषयभेदव्यवस्थापनेन तात्पर्यार्थनिर्णायकतया श्रीवाल्मीक्यज्ञिप्रायानुगा-  
 रामानुजीयव्याख्यातनिश्चोकीव्याख्यासमेता भूषणाख्यव्याख्याऽवश्यं निरीक्षणी-  
 येति, मन्येऽहं निरीक्षणेनाज्ञानामवश्यं जिवृक्षा भवेदिति ।

व्याख्याद्योपेतस्य भगवद्गुणदर्पणाख्यस्य  
 श्रीविष्णुसहस्रनामभाष्यस्य  
**प्रशिद्धिपत्रिका ।**

अनुष्टुपश्चोकात्मकनिरुद्धत्याख्यव्याख्यासमेतं, नामनिर्वचनोपयोगिप्रकृतिप्र-  
 त्ययप्रदर्शकनिखिलतन्त्रप्रधानीभूतपाणिनीयस्मृतिसूत्रगर्भितनिर्वचनाख्यद्वितीय-  
 व्याख्यासमेतं च, सहदयहृदयाह्लादकं श्रीभगवद्गुणदर्पणाख्यं श्रीविष्णुसहस्र-  
 नामभाष्यमासीत्तैलङ्गदेशाक्षरैर्द्वाविडेशाक्षरैश्च मुद्रितम्, तच्चास्मदीयदेशोऽती-  
 वदुर्लभतरमिति मनसि निधाय सकलजनोपकृतयेऽतिप्रयासेन तच्च तैलङ्गदेशादि-  
 हानाख्य देवाक्षरैर्लेखयित्वा मुहुर्मुहुरज्ञजनद्वारा संशोध्य च, स्थूलसूक्ष्माक्षरै-  
 र्मनोहरं मुद्रयते, येषां महाशयानां स्याज्जिवृक्षा, तैर्द्वुततरम् सूचना कार्यं,  
 यतस्तत्पुस्तकप्रेषणेऽहमुदयतोभवेयमिति मे विज्ञप्तिः

**श्रीकृष्णदासात्मजो गंगाविष्णुः**

**“लक्ष्मीविंकटेश्वर” मुद्रणयन्त्रम् कल्याण—(मुंबई)**

